787

॥ श्रीहरिः ॥

कलिपापखडोदय

साक्षरा विपीरीताश्चेद्राक्षसा एव केवलम्

लेखक
वैष्णव साधु श्रीसरयू दास जी वीरवैष्णव

सम्पादक
अवधवासी विद्याभूषण साहित्याचार्य्य
श्रीरामविधुशरण "विधु"
कविरत्न

प्रकाशक—
सेठ छोटेलाल लक्ष्मीचन्द
श्री वैष्णव पुस्तकालय श्रीअयोध्याजी

द्वितीयबार] १९९१ [मूल्य ।=

क्र
२०७

प्रकाशक

सेठ [illegible] लक्ष्मीचन्द

[illegible] शोध संस्थान
[illegible]
[illegible] सेवा ट्रस्ट

॥ श्रीहरिः ॥

कलिपाषण्डोदय

साक्षरा विपरीताश्चेद्राक्षसा एव केवलम्

लेखक

सर्व सज्जनों के बिनोदार्थ श्री साकेतबासी

वैष्णव साधु श्रीसरयूदा जी बीरवैष्णव

सम्पादक

अवधवासी विद्याभूषण साहित्याचार्य्य

श्रीरामविधुशरण "बिधु"

कविरत्न

प्रकाशक

सेठ छोटेलाल लक्ष्मीचन्द

श्री वैष्णव पुस्तकालय श्रीअयोध्याजी

द्वितीयबार] १६६१ [मूल्य ।=)

महर्षि वाल्मीकि शोध संस्थान
787
अयोध्या

महर्षि वाल्मीकि शोध संस्थान
अयोध्या
... म राम जानकी सेवा ट्रस्ट

भूमिका

सनातन धर्मावलम्बी सज्जन पुरुषों को विदित हो कि आज कल इस कपट निधान कलिकाल के घोर प्रभावसे हमारी मातृभूमि भारत की जैसी (अस्तव्यस्त) याने तहस नहस दशा हो रही है वह किसी से छिपी नहीं है ; जिस भारत भूमि में एक से एक धर्मात्मा, एक से एक ज्ञानी, एक से एक विज्ञानी, एक से एक विरक्त, एक से एक विद्वान्, एक से एक धर्मोपदेशक एक से एक शूर वीर हो गये, आज उसी मातृ भूमि में एक से एक नास्तिक और पाखण्डियों का अवतार हो रहा है, इसका कारण क्या है ? इसका कारण केवल कपट निधान कलिकाल है दूसरा नहीं। जिस कपट निधान कलिकाल ने हमारे धर्मात्मा श्रीपरीक्षित जी महाराज का कपट ही से नाश किया उसी कपट निधान कलिकाल ने आज अपने अनुचरों के सहित प्रगट हो सनातन धर्म का नाश करना आरम्भ कर दिया है, इस घोर कलिकाल में बड़े २ नास्तिक और पाखण्डी लोग हो गये हैं और बर्तमान काल में भी बहुत से नास्तिक पाखण्डी भोले भाले अनपढ़े लोगों को रामायणादि ग्रंथों से मीठी २ बातें सुनाकर सनातन-धर्म से और श्रीरामकृष्णादिकों की भक्ति से विमुख कराकर महा भ्रम जाल में डाल देते हैं, इस अन्याय को देख कर यह

कलिपाखण्डोदय नामक ग्रन्थ निर्माण करना पड़ा जिस में १५० श्लोकों में नास्तिक पाखण्डियों को राक्षस और यमदूतों का अवतार साबित किया है तथ दुष्टों के लक्षण व स्वभा-बादिकों का बर्णन करके अन्त में श्रीराम नाम से ही उद्धार होना दिखाया है जो कोई सज्जन पुरुष इस ग्रंथ को देखेंगे वे नास्तिक पाखण्डियों के कुतर्क रूप भ्रम जालसे बच जायगें।

भवदीय—

साकेत बासी, पं० सरयूदास,

अयोध्याजी।

* श्रीसीतारामाभ्यां नमः *

कलिपाखण्डोदयः

—:*:—:*:*:—:*:—

कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनानां, पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपदप्राप्तये प्रस्थितस्य । विश्रामस्थानमेकं कविवरवचसां जीवनं सज्जनानां, वीजं धर्मद्रुमस्य प्रभवतु भवतां भूतये रामनाम ॥ १ ॥

(अस्यार्थः)

सम्पूर्ण कल्याण जो हैं ज्ञान वैराग्य योग जप तपादि उसके स्थान यथा—नाम रामको कल्पतरु कलि कल्यान निवास । जो सुमिरत भयो भाँगते तुलसी तुलसीदास ॥ पुनः कैसा है कि (कलिमल मथनं) याने कलिकालका जो सम्पूर्ण मल नाम पाप है उसके मथन नाम नाश करने वाले हैं, यथा—कलि केवल मल-मूल मलीना । पाप पयोनिधि जन मन मीना ॥ नाम काम तरु काल कराला । सुमिरत समन सकल जग जाला ॥ पुनः कैसा है कि (पावनं पावनां) याने जितने ज्ञान (नहि विज्ञान सदृशं पवित्रमिह विद्यते इत्यादि प्रमाणों से ज्ञान वैराग्य योग जप

तीर्थ व्रतादि के पवित्र करने वाले हैं यथा—एहि महँ रघुपति नाम उदारा । अति-पावन पुराण श्रुति सारा ॥ तीरथ अमित कोटि सम पावन । नाम अखिल अघ ओघ नशावन ॥ इत्यादि कहा है पुनः कैसा है कि (पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपद प्राप्तये प्रस्थितस्य) याने (मुमुक्षु) मोक्ष की चाहने वालों के के लिये और शीघ्र परमपद श्रीसाकेत लोक पहुँचाने के वास्ते श्रीरामनाम खर्चाके समान है। भावबिना श्रीरामनाम जपे मोक्ष होना दुर्लभ है ; यथा ज्ञान मार्गश्च नामतः इति श्रुतिः ॥ अर्थात् ज्ञानमार्ग जाने के लिये श्रीरामनाम ही है दूसरा नहीं, पुनः— जासु नाम जपि सुनहु भवानी । भव बन्धन काटहिं नर ज्ञानी ॥ रामनाम अवलम्ब बिनु, परमारथ की आस । वरषत वारिद बुन्द गहि, चाहत चढ़न अकास ॥ पुनः कैसा है कि (विश्राम-मस्थानमेकं कविवरवचसां) अर्थात् कूजन्तं राम रामेति मधुरं मधुराक्षरं । आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ॥ इत्यादि प्रमाणों के बड़े २ कवियों के वचन के विश्राम दायक हैं, भाव जिसके बिन अपने ग्रन्थ (काव्य) में श्रीरामनाम का माहात्म्य वर्णन किया है, वही तो सब कबियों में श्रेष्ठ है नही तो श्रीरामनाम बिना काव्य वृथा है. यथा—भनिति विचित्र सुकवि कृत जोऊ । रामनाम बिनु सोह न सोऊ ॥ बिधुबदनी सब भाँति सवाँरी । सोहन बसन बिना बर नारी ॥ पुनः— राम नाम बिनु गिरा न सोहा । देखु विचार त्यागि मद मोहा ॥ बसन हीन नहि सोह सुरारी । सब भूषण भूषित बर नारी ॥ इत्यादि कहा है इस से यह दिखाया कि जिस काव्य में रामनाम

नहीं है उस काव्यको नग्न स्त्री की तरह देखना धर्म नहीं है और जिस काव्य में श्रीरामनाम वर्णन हो वह काव्य पढ़ना सुनना धर्म है, यथा- सब गुण रहित कुकविकृत बानी । रामनाम जस अङ्कित जानी ॥ सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही । मधुकर सरिस सन्त गुणग्राही ॥ इत्यादि कहा है पुनः कैसा है कि (जीवनं सज्जनानां) याने साधु मात्रका सर्वस्व जीवन है यथा— नाम जीह जपि जागहिं जोगी । विरति विरंचि प्रपञ्च वियोगी ॥ सकल कामना हीन जे, राम भगति रस लीन । नाम प्रेम पीयूष हृद तिनहुँ किये मन मीन ॥ इत्यादि कहा है पुनः कैसा है कि (बीजं धर्मद्रुमस्य) याने धर्म रूप वृक्षके बीज है श्री रामनाम यथा—नाम रामको अङ्क है, सब साधन है सून । अङ्क गये कछु हाथ नहि अङ्क रहे दश गून ॥ ऐसा जो सर्वोपरि श्री रामनाम है वह मेरे लिये और सब संसार के लिये कल्याणरूप हो ॥ इस घोर कलिकाल के नाश करने वाले और सब कल्याणदायक श्रीरामनाम को बार २ नमस्कार करके अब गुरु शिष्य के परस्पर सम्बाद रूप में कलिपाखण्डोदय नामक ग्रन्थ की रचना करते हैं । जिसको देखकर सज्जन लोग पाखण्डियों के नाना कुतर्क रूप भ्रम जालसे बचेगे ।

प्रश्न—हे स्वामी जी कलियुग किसको कहते हैं, और कलि काल का लक्षण क्या है सो कृपा करके कहिये ।

उत्तर—हे शिष्य कलिके जन्म व लक्षण तथा उसके धर्म हमरे पूज्यपाद महर्षियों ने पुराणादिकों में बहुत वर्णन किया

है. तो भी संक्षेप से हम कहते हैं तुम सावधान होकर सुनो परमात्मा परब्रह्म सच्चिदानन्द ने चारयुग याने सत्ययुग १ त्रेता २ द्वापर ३ कलि ये चार युग बनाये, तिसमें सत्ययुग की उत्पत्ति कार्तिक शुक्ला नौमी के दिन हुई, सत्ययुग ब्राह्मण वर्ण है इसकी परमायु १७२८००० वर्ष की हुई इस सत्ययुग में धर्म चारों पद (पैर) से रहता है, त्रेतायुग की उत्पत्ति वैशाख शुक्ला तृतीया के दिन हुई इसकी परमायु १२९६००० वर्ष की हुई त्रेतायुग क्षत्रिय वर्ण है, इस त्रेता युग में धर्म तीन पद से रहता है, द्वापर युगकी उत्पत्ति माघ कृष्णा अमावस्या के दिन हुई, इसकी परमायु ८६४००० वर्ष की हुई, द्वापर युग वैश्य वर्ण है इस द्वापर युग में धर्म दो पदसे रहता है कलियुग की उत्पत्ति भाद्रपद अमावस्याके दिन हुई, इसकी परमायु ४३२००० वर्षकी हुई कलियुग शूद्र वर्ण है इस कलियुग में धर्म केवल एक पद से रहता है सो भी अन्त में नष्ट होजाता है।

प्रश्न—हे स्वामी जी आपने जो सत्ययुगादि को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्ण कहा सो कहाँ लिखा है कहिये !

उत्तर—हे शिष्य कूर्म पुराण में ऐसा लिखा है।

ब्राह्मं कृतयुगं प्रोक्तं त्रेता तु क्षत्रियं युगम् ।
वैश्यं द्वापरमित्याहुः शूद्रं कलियुगं स्मृतम् ॥२॥

अर्थ—सतयुग को ब्राह्मण त्रेता युग को क्षत्रिय द्वापर को वैश्य और कलियुग को शूद्र कहा है।

प्रश्न—हे स्वामी जो चारों युग में क्रमशः धर्म के एक २ पाद हानि होना यह कहाँ लिखा है सो कृपा कर कहिये।

उत्तर—हे शिष्य यह प्रसंग तो सर्वत्र पुराणों में तथा स्मृतियों में प्रसिद्ध है यथाः—मनुस्मृतौ अ० १ श्लोक ८१। ८२।

चतुष्पात्सकलो धर्मः सत्यं चैव कृते युगे।
नाधर्मेणागमः कश्चिन्मनुष्यान्प्रति वर्तते॥३॥
इतरेष्वागमाद्धर्मः पादशस्त्ववरोपितः।
चौरिकानृतमायाभिर्धर्मश्चापैति पादशः॥४॥

अर्थ—सत्ययुग में धर्म चारों पद से पूर्ण था सब में सत्य था और अधर्म से धन व विद्या की प्राप्ति करनी नहीं थी त्रेता आदि युगों में अधर्म से एक २ चरण कमती होने लगा याने त्रेतायुग में चोरी आदि अधर्म से एक पद हीन होने से धर्मका तीन पद रहता है द्वापर में मिथ्या भाषण रूप अधर्म से दो चरण हीन होने से धर्म का दो चरण रहता है कलियुग में नाना माया (छल कपट) रूप अधर्म के होने से तीसरा चरण नाश होने से केवल एकही चरण दान रह जाता है वो भी अन्त में क्षय हो जाता है। इससे चारों युग में धर्मका एक २ चरण हानि होना स्पष्ट है।

है. तो भी संक्षेप से हम कहते हैं तुम सावधान होकर सुनो परमात्मा परब्रह्म सच्चिदानन्द ने चारयुग याने सत्ययुग १ त्रेता २ द्वापर ३ कलि ये चार युग बनाये, तिसमें सत्ययुग की उत्पत्ति कार्तिक शुक्ला नौमी के दिन हुई, सत्ययुग ब्राह्मण वर्ण है इसकी परमायु १७२८००० वर्ष की हुई इस सत्ययुग में धर्म चारों पद (पैर) से रहता है, त्रेतायुग की उत्पत्ति वैशाख शुक्ला तृतीया के दिन हुई इसकी परमायु १२९६००० वर्ष की हुई त्रेतायुग क्षत्रिय वर्ण है, इस त्रेता युग में धर्म तीन पद से रहता है, द्वापर युगकी उत्पत्ति माघ कृष्णा अमावस्या के दिन हुई, इसकी परमायु ८६४००० वर्ष की हुई, द्वापर युग वैश्य वर्ण है इस द्वापर युग में धर्म दो पदसे रहता है कलियुग की उत्पत्ति भाद्रपद अमावस्याके दिन हुई, इसकी परमायु ४३२००० वर्षकी हुई कलियुग शूद्र वर्ण है इस कलियुग में धर्म केवल एक पद से रहता है सो भी अन्त में नष्ट होजाता है।

प्रश्न-हे स्वामी जी आपने जो सत्ययुगादि को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्ण कहा सो कहाँ लिखा है कहिये !

उत्तर—हे शिष्य कूर्म पुराण में ऐसा लिखा है।

ब्राह्मं कृतयुगं प्रोक्तं त्रेता तु क्षत्रियं युगम् ।
वैश्यं द्वापरमित्याहुः शूद्रं कलियुगं स्मृतम् ॥२॥

अर्थ—सतयुग को ब्राह्मण त्रेता युग को क्षत्रिय द्वापर को वैश्य और कलियुग को शूद्र कहा है।

प्रश्न—हे स्वामी जो चारों युग में क्रमशः धर्म के एक २ पाद हानि होना यह कहाँ लिखा है सो कृपा कर कहिये।

उत्तर—हे शिष्य यह प्रसंग तो सर्वत्र पुराणों में तथा स्मृतियों में प्रसिद्ध है यथाः—मनुस्मृतौ अ० १ श्लोक ८१। ८२।

चतुष्पात्सकलो धर्मः सत्यं चैव कृते युगे।
नाधर्मेणागमः कश्चिन्मनुष्यान्प्रति वर्तते॥३॥
इतरेष्वागमाद्धर्मः पादशस्त्ववरोपितः।
चौरिकानृतमायाभिर्धर्मश्चापैति पादशः॥४॥

अर्थ—सत्ययुग में धर्म चारों पद से पूर्ण था सब में सत्य था और अधर्म से धन व विद्या की प्राप्ति करनी नहीं थी त्रेता आदि युगों में अधर्म से एक २ चरण कमती होने लगा याने त्रेतायुग में चोरी आदि अधर्म से एक पद हीन होने से धर्मका तीन पद रहता है द्वापर में मिथ्या भाषण रूप अधर्म से दो चरण हीन होने से धर्म का दो चरण रहता है कलियुग में नाना माया (छल कपट) रूप अधर्म के होने से तीसरा चरण नाश होने से केवल एकही चरण दान रह जाता है वो भी अन्त में क्षय हो जाता है। इससे चारों युग में धर्मका एक २ चरण हानि होना स्पष्ट है।

प्रश्न—हे स्वामी जी दयानन्द ने तो चारों युग में एकसा धर्म माना है और सत्यार्थ प्रकाश में दयानन्द ने लिखा है कि कलियुग नाम कालका है काल निष्क्रिय होने से कुछ धर्माधर्म के करने में साधक बाधक नहीं ऐसा लिखा है और मन्वादिक तो युग को साधक बाधक लिखते हैं सो यह क्या बात है।

उत्तर—हे शिष्य तुमही बिचार करो कि मनुजी के बचन माननीय हैं कि स्वामी दयानन्द का लेख माननीय है। हे शिष्य मनुस्मृति प्रमाणिक ग्रंथ है इससे मनुजी ने जो कहा है सबही सत्य है दयानन्द का कहना झूठा है देखो दयानन्द ने यजुर्वेद के २१ अध्याय ६ मंत्र के व्याख्या में भावार्थ लिखा है कि दिव्य गुण वाला पुरुष प्राणापान के वास्ते छाग याने बकरे के साथ भोग करे, दुःख नाशार्थ याने दुःख नाश होनेके वास्ते छेरियाने बकरी आदि पशु से भोग करे, वाणी अर्थात् उत्तम वाणी विद्या के लिये भेड़ के साथ भोग करे ऐश्वर्य के वास्ते बृषभ (बैल)के साथ भोग करे। ऐसा लिखा है हे शिष्य अब तुम जानलो कि दयानन्द कैसा था जिनको उनके चेला लोग महर्षि कहते हैं वाहरे महर्षि जी ! तथा महर्षि जी के चेले, जो कि ऐसे महर्षि जी के व्यभिचार लेख पर कुर्बान होरहे हैं। हे शिष्य कहां तक कहैं सैकड़ों बातें दयानन्द ने ऐसी ही लिखी हैं और युगानुसार धर्म तो सनातन से प्रमाण है सो मनुस्मृति में ही लिखी हैं यथा प्रथमाध्याये श्लोक ८३।८४।८५।८६।

अरोगाः सर्वसिद्धार्थाश्चतुर्व्वर्षशतायुषः ।
कृतत्रेतादिषु ह्येषामायुर्ह्रसति पादशः ॥ ५ ॥
वेदोक्तमायुर्म्मर्त्यानामाशिषश्चैव कर्म्मणाम् ।
फलं त्वनुयुगं लोके प्रभावश्च शरीरिणाम् ॥६॥

अर्थ—सत्ययुग में सब रोग रहित थे जो जिस अर्थ के लिये कामना करता था वह तत्काल सिद्ध होती थी सबकी आयु चारसौ वर्ष की होती थी और त्रेता आदि तीन युगों में सब की आयु एक २ सौ वर्ष की घटने लगी अर्थात् त्रेता में तीन सौ वर्ष की, द्वापर में दो सौ वर्ष की और कलियुग में सौ वर्ष की आयु हुई । लोक में युगों के अनुसारही सब मनुष्यों की परमायु हुई काम्य कर्मों का फल प्रार्थना और ब्राह्मणादिकों का शाप अनुग्रह आदि फलित होता है जैसा कि सत्ययुगमें तत्काल शाप लगता था, त्रेतामें दश दिन मे, द्वापर में एक मासमें और कलियुग में एक वर्ष में शाप लगता है इस प्रकार से पाराशर स्मृति में चरों युगों के धर्म विस्तार से वर्णन हैं हे शिष्य जो विषय मनुस्मृति में संक्षेप रूप से कहा है वह विषय अन्य स्मृतियों में विस्तार से कहा है इससे उनको प्रामाणिक जानना चाहिये काहे से कि लिखा है कि (ग्रन्थस्य ग्रन्थान्तरंटीका) एक ग्रन्थ का दूसरा ग्रन्थ टीका है पुनः मनुजी लिखते हैं यथा प्रथमाध्याये श्लोक ८५ । ८६ ॥

अन्ये कृतयुगे धर्म्मास्त्रेतायां द्वापरेऽपरे ।
अन्ये कलियुगे नृणां युगह्रासानुरूपतः ॥७॥
तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते ।
द्वापरे यज्ञमेवाहुर्दानमेकं कलौयुगे ॥ ८ ॥

अर्थ—सत्ययुग में मनुष्यों के दूसरे धर्म हैं त्रेता में दूसरे ही धर्म हैं द्वापर में और ही धर्म हैं और कलियुग में मनुष्यों का दूसरा धर्म है, युगानुरूप धर्म में भी विलक्षणता होती है सो दिखाते हैं सत्ययुग में तप प्रधान है त्रेता में ज्ञान द्वापर में यज्ञ करना कलियुग में प्रधान एक दान है। यथा—श्री तुलसी कृत रामायणे उत्तर काण्डे:— प्रगट चारि पद धर्म के कलिके में एक प्रधान । जेन केन विधि दीन्हे दान करै कल्यान ॥ इत्यादि। इससे सब शास्त्रों का सिद्धान्त एक है किसी ने थोरा कहा है किसी ने बहुत कहा है परन्तु कहा है सभी ने हे शिष्य महाभारत के बन पर्व में श्रीहनुमानजी के और भीम के संवाद में चारों युगों के धर्म विस्तार से वर्णन हैं वहाँ पर श्री हनुमानजी ने भीम से कहा है कि सत्ययुग में परमात्मा का शुक्ल वर्ण त्रेता में रक्तवर्ण द्वापर मे पीतवर्ण कलियुग में कृष्ण वर्ण हो जाता है। एवं कर्म धर्म ऋषि मुनि देवता देवी चन्द्र सूर्य तीर्थ व्रत योग जप राजा प्रजा पशु पक्षी वृक्ष लता जो कुछ सृष्टि मात्र में है सो सबकी व्यवस्था युगानुसार होजाती है, इससे मेरेमें और त्रेताके समयका पराक्रम

नहीं है अबतो कलियुग आगया। इस प्रकार से बहुत कहा है। इससे सब ऋषियों का सिद्धांत एक है केवल स्वामी दयानन्द ही का सिद्धान्त वेद विरुद्ध है।

प्रश्न—हे स्वामीजी कोई २ कहते है कि आलस करना ही कलियुग है और कलियुग कुछ भी नहीं है सो क्या बात है कहिये।

उत्तर—हे शिष्य यह भी कहनो मूर्खता ही है क्यों कि आलस कलियुग के नौ गुणों में से एक प्रधान गुण है इससे कलियुग हो प्रधान जानना चाहिये।

प्रश्न—हे स्वामीजी कोई २ दयानन्दीय कहते हैं कि वेद में कलियुग का नाम नहो है पुराणों में है इससे प्रमाणिक नहीं है।

उत्तर—हे शिष्य यह बात भी आज कलके मूर्ख दयानन्दीय लोगों का है वे लोग ऐसी ही मूर्खता की कपोल कल्पित बातें किया करते हैं यह नहीं विचारते हैं कि जब वेद में नहीं प्रमाण होगा तो मनुस्मृति महाभारतादिक आर्ष ग्रन्थों में कहाँ से आवेगा हे शिष्य सत्ययुगादि चारों युग को तो दयानन्द ने भी भाष्य भूमिकादि ग्रंथों में माना है देखो (ऐतरेय ब्राह्मण अ० ३ खण्ड १५) में लिखा।

कलिः शयानो भवति संजिह्वानस्तु द्वापरः।
उत्तिष्ठंस्त्रेताभवति कृतं संपद्यते चरणम् ॥ ६ ॥

अर्थात् आलस में पड़े सोते रहना ही कलियुग है सचेत होना द्वापर है उठकर तैय्यार होजाने को त्रेता कहते है और कार्य्य करने को सत्ययुग कहते हैं ऐसेही मनुजीने राज्य नीति शिक्षा प्रकरण में भी लिखा है । यथा ९ अध्याय श्लोक ३०१ । ३०२

कृतं त्रेतायुगं चैव द्वापरं कलिरेव च ।
राज्ञों वृत्तानि सर्वाणि राजा हि युगमुच्यते॥१०
कलिः प्रसुप्तो भवति सजाग्रद्द्वापरं युगम् ।
कर्मस्वभ्युद्यतस्त्रेता विचरंस्तु कृतं युगम् ॥११॥

अर्थ—सत्ययुग त्रेता द्वापर कलियुग ये चारों युग राजा की चेष्टा रूप हैं इस कारण से राजा को ही युग कहते हैं। सोता हुआ याने अज्ञान में पड़े रहना कार्य्य न करना वह राजा कलियुग है और जागता हुआ अर्थात कार्य के दोष गुण जान कर भी न करना वह द्वापर युग है कार्य्य करने में उपस्थित होजाना यह त्रेता युग है और जब कर्म करते हुए विचरे तब सत्ययुग जानना चाहिये इससे यह दिखाया कि धर्माधर्म सब राजा के अधीन हैं जैसा राजा होगा तैसी ही प्रजा होगी इसमें कोई संदेह नहीं। यथा नीति शास्त्रे—

राज्ञि धर्मिणि धर्मिष्ठाः पापे पापाः समेसमाः ।
राजानमनुवर्तन्ते यथा राजा तथा प्रजा ॥१२॥

योहि धर्मपरो राजा देवांशोन्यश्च रक्षसाम्।
अंशभूतो धर्मलोपी प्रजापीडाकरो भवेत्॥१३॥

— राजा के धर्मात्मा होने से प्रजा भव धर्मात्मा होती है राजा के अधर्मी होनेसे प्रजा अधर्मी होती है राजाकी वृत्ति पाप पुण्य में सम याने बराबर होने से प्रजा भी उसी प्रकार की होती है काहे कि राजा के पीछे चलनेवाली प्रजा होती है इससे जैसा राजा होता है उसी प्रकार की प्रजा होती है सो वेनु राजा का चरित्र प्रसिद्ध ही है जो धर्मात्मा राजा है वह तो देवांश है अर्थात् "नराणां च नराधिपः" वही राजा है और दूसरा जो अधर्मी राजा है धर्म का नाश करनेवाला तथा प्रजा को दुःख देने वाला वह राक्षसों का अंश है ऐसे अधर्मी राजा को जो ईश्वर का अन्श जानते हैं वे भी मूर्ख ही हैं।

प्रश्न—हे स्वामी जो कहीं तो युग को भिन्न कहते हैं कहीं राजा को युग कहा है यह क्या बात है सो कृपा करके कहिये।

उत्तर—हे शिष्य इसमें कोई सन्देह नहीं है कि ब्राह्मणादि चारों वर्ण मुख्य हैं परन्तु उत्तम मध्यम नीच कनिष्ठादि गुण दिखाने के वास्ते ऋषियों ने सत्ययुग को ब्राह्मण कहा है त्रेता को क्षत्रिय कहा है द्वापर को वैश्य कहा है कलियुगको शूद्र कहा है इससे यह नहीं जानना चाहिये कि ब्राह्मणादि चारोवर्ण कुछ नहीं है चारो युग ही मुख्य चारोवर्ण हैं यह कहना अयोग्य है और वर्णव्यवस्था तो चारो वेद में भी है वृक्षों में भी है पक्षुमों

में भी है श्वेत पीतादि मृत्तिका में भी है जल में भी है। यथा गौतमीय तन्त्रे तथा अत्रिस्मृतौ—

शुक्लामृत्स्ना या भूमि ब्राह्मी सा परिकीर्तिता।
क्षत्रिया रक्तमृत्स्ना च हरिद्वैस्या प्रकीर्तिता।
कृष्णभूमिर्भवेच्छूद्रा चतुर्धा सा प्रकीर्तिता॥१४॥
स्रवद्यद्ब्राह्मणस्तोयं सरस्यं क्षत्रियं तथा।
वापीकूपे तु वैश्यास्स्याच्छूद्रं भाण्डोदकं तथा॥१५

अर्थ—शुक्ल (श्वेत) मृत्तिका ब्राह्मणी है रक्त मृत्तिका क्षत्रिया है, और हरित मृत्तिका वैश्या है कृष्णा (काली) मृत्तिका शूद्रा है इस प्रकार से मृत्तिका में चार भेद कहा है॥ अत्रि स्मृति में लिखा है कि नदी झरना के जल ब्राह्मण हैं, कृत-टाकादि का जल क्षत्रिय है, बावड़ी कूप का जल वैश्य है, भाण्डस्थ वारि अर्थात् घट का जल शूद्र है॥ इत्यादि बहुत कहा है इससे ब्राह्मणादि वर्णव्यवस्था की हानि नहीं है तैसे ही यहाँ पर सत्ययुगादि को राजाको वृत्तिपर घटाया है, हे शिष्य ऐसे ही श्रीभागवतादि ग्रन्थों में चारों युगों को मानसिक वृत्ति-घटाया है सोई बात श्रीगोस्वामी जी ने श्रीरामायण जी मे लिखा है यथा—

* चौपाई *

कृतयुग धर्म होहिं सब केरे। हृदय राम माया के प्रेरे॥

शुद्ध सत्व समता विज्ञाना । कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना ॥
सत्व बहुत रज कछु रति करमा । सब-विधि सुख त्रेताकर धरमा
बहु रज स्वल्प सत्य कछु तामस । द्वापर धरम हरष भय मानस
तामस बहुत रजोगुण थोरा । कलि प्रभाव विरोध चहुँ ओरा ॥
बुध युग धरम जानि मनमाहीं । तजि अधरम रति धरम कराहीं

अर्थात्—जब शुद्ध सतोगुणी स्वभाव हो और ज्ञान विज्ञान शांति समता क्षमादि गुणयुक्त चित्त की बृत्ति हो तब जान लेवे कि इस समय में प्रभु की कृपासे मेरे अन्तःकरण में सत्य-युग का प्रभाव आगया है और जब सतोगुण विशेष हो, किञ्चित् रजोगुण हो तो जान लेना कि त्रेतायुग का प्रभाव है ॥ रजो-गुण विशेष हो और सतोगुण तमोगुण कुछ हो तो जान लेवे कि द्वापर का प्रभाव है । और जब तामस विशेष हो रजोगुण कम हो सर्वत्र सब के मन में राग द्वेष हो जाय तो जान ले कि अब कलि का प्रभाव है ; इससे पण्डितों को चाहिए कि युगानुसार अपनी बृत्ति को जान कर अधर्म से मनको हटाकर धर्म में लगावें, हे शिष्य इसी प्रकार से बहुत कहा है, इससे चारों युग भिन्न हैं इनके धर्म भी भिन्न २ हैं विशेष देखना हो तो वैष्णव कुलभूषण सारसंग्रह नामक ग्रन्थ देखो, उस में विस्तार से वर्णन है ।

प्रश्न—हे स्वामी जी चारोंयुग केवल भारतखण्ड ही में हैं कि और भी द्वीपांतरों में ।

उत्तर--हे शिष्य और २ द्वीप जो हैं सो केवल भोग भूमि है और भारतखण्ड जो है सो कर्म भूमि है इस मातृ भूमि के बराबर कोई भी द्वीप द्वीपान्तर नहीं है, और न सत्ययुगादि के धर्म ही किसी द्वीप खंड में हैं यह नियम केवल भारतखंड में ही है यथा--

विष्णुर्वरिष्ठो देवानां ह्रदानामुदधिर्यथा।
नदीनां च यथा गंगा पर्वतानां हिमालयः ॥१६॥
अश्वत्थस्सर्ववृक्षाणां राज्ञामिन्द्रो यथा वरः।
देवीनां च यथा दुर्गा वर्णानां ब्राह्मणो यथा १७
तथा श्रेष्ठा कर्मभूमिर्भूमौ भारतमण्डम्।
चत्वारि भारते वर्षे युगान्यत्र भवति हि॥१८॥
कृतं त्रेता द्वापरश्च कलिश्चान्यत्र न क्वचित्॥

अर्थ--जैसे सब देवताओं में श्रेष्ठ विष्णु, ह्रदों में समुद्र, नदियों में श्रीगङ्गाजी और पर्वतों में हिमाचल है। सब वृक्षों में पीपल, राजाओं इन्द्र, शक्तियों में दुर्गा, और सब वर्णों में ब्राह्मण श्रेष्ठ है॥ उसी प्रकार से पृथ्वीमंडल में सब से श्रेष्ठ कर्मभूमि भारतखड है जिसमें सत्ययुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग ये चारो युग होते हैं और खंडव द्वीपों में नहीं॥ इससे भारतखंड के बराबर कोई उत्तम नहीं है हे शिष्य जिस भारत खड में साक्षात् परमात्मा ने श्रीरामकृष्णादि रूप

धारण कर नानाप्रकार की लीलाएं की है। फिर इस मातृ भूमि के बराबर कौन है यथा—

यत्र साक्षादजन्मापि जन्म जग्राह वै हरिः।
रामकृष्णादिनाम्ना च प्रसिद्धोऽद्भुतचेष्टितः १६
एवं भारतभूभागं प्रशंसन्ति दिवौकसः।
तं प्राप्य विषयासक्तास्ते मुष्टामायया हरेः ॥२०
सम्प्राप्य भारते जन्म सत्कर्मसु पराङ्मुखः।
पीयूषकलशं हित्वा विषभांडं स इच्छति ॥२१॥

अर्थ—जिस भारतखंड में साक्षात् अजन्मा होकर भी भगवान श्रीरामकृष्णादि नाम से प्रसिद्ध होकर अद्भुत लीला किया ऐसा उत्तम भारतखंड है; जिस की प्रशंसा देवता लोग करते हैं, उस भारतखंड में मनुष्य जन्म पाकर जो विषय में आसक्त हो रहा है, वह भगवत माया से मोहित हो रहा है। भारतखंड में जन्म लेकर जो सत्कर्म याने ईश्वर का भजन स्मरण तीर्थ, व्रत, दान पुण्यादि कर्मों से विमुख रहा वह जानो अमृत के घड़े को छोड़ कर विष के घड़े को चाहा है ऐसा मूर्ख है। हे शिष्य इस प्रकार से बहुत कहा है भारत वर्ष के समान कोई देश नहीं है। जिस भारत खंड में जन्म लेने के वास्ते देवता लोग भी चले आते हैं यथा—विष्णुपुराणे—

गायन्ति देवाः किल गीतकानि—
धन्यास्तु ये भारतभूमि भागे ।
स्वर्गापवर्गस्य च हेतुभूते
भवंति--भूयः पुरुषाः सुरत्वात् ॥

अर्थ—निश्चय पूर्वक सब देवता लोग गीत गाते हैं कि भारत वासी सभी है । जहाँ देव पदवी को छोड़ कर स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) के वास्ते देवता लोग भी बार २ मनुष्य होते हैं । हे शिष्य भारत खंड में जन्म लेकर मनुष्य चाहे जिस पदको प्राप्त कर सक्ता है इसमें कोई भी संदेह नहीं है ।

प्रश्न—हे स्वामीजी अब आप कलियुग के उत्पत्ति और लक्षण कहिये ?

उत्तर—हे शिष्य कलियुग के लक्षण गरुड़ पुराण में ऐसे लिखे हैं यथा--

यदा सदाऽनृतं तन्द्रानिद्राहिंसाविषादनम् ।
शोकमोहभयं दैन्यं स कलिस्तु तदा स्मृतः ।२२

अर्थ--सदा झूठ बोले १ आलस २ निद्रा ३ जीव हत्या ४ विषाद अर्थात् दुःख ५ शोक मानसिक व्यथा ६ मोह (अज्ञान) ७ भय (डर) ८ दीनता ९ ये नौ दशाएं जब हो जावे तब कलियुग जानो । सो इस काल में सभी बातें प्रसिद्ध हो रही हैं

यही कलियुग के लक्षण है और कलियुगके जन्मादिकी व्यवस्था कल्कि पुराण में ऐसी लिखी है यथा--

कः कलिः कुत्र वा जातो जगता मीस्वरःप्रभुः ।
कथं वा नित्यधर्मस्य विनाशः कलिना कृतः २३

अर्थ—शौनकादिक ऋषीलोग श्रीसूतजी से बोले कि हे प्रभो ! कलि कौन है कहाँ जन्म लिया है वह किस प्रकार से पृथ्वी का शासन कर्त्ता स्वमी हुआ और किस प्रकार से उस कलिने नित्य धर्म का नाश किया सो कहिये ? हे शिष्य इसे सुन श्रीसूत जी शौनकादि से बोले यथा—

ताः शृणुध्वं महभागाः समाहितधियोऽनिशम् ।
गते कृष्णे स्वनिलयं प्रादुर्भूतो यथा कलिः ॥२४

अर्थ —हे शौनकादिक महाभागशाली भगवान श्रीकृष्णजी के स्वस्थान (गौ लोक) चले जानेके बाद कलिको उत्पत्ति जिस प्रकार से हुई सो सब चरित्र निरंतर सावधान होकर श्रवण करो मैं वर्णन करता हूँ।

प्रलयान्तें जगत्स्रष्टा ब्रह्मा लोकपितामहः ।
ससर्ज्ज घोरं मलिनं पृष्ठदेशात्स्वपातकम् ॥२५
सत्राधर्मइतिख्यातस्तस्य वंशानुकीर्त्तनात् ।

श्रवणात्स्मरणाल्लोकः सर्व्वपापै प्रमुच्यते ॥२६॥

अर्थ—सृष्टि कर्त्ता श्री ब्रह्मा जी ने प्रलय काल के अन्त याने बीतने पर अपनी पीठ से घोर मलिन पापको उत्पन्न किया। वही पाप अधर्म नाम से विख्यात हुआ उस अधर्म वंश के चरित्र श्रवण स्मरण करने से लोग सब पापों से छूट जाते है।

अधर्मस्य प्रिया रम्या मिथ्या मार्ज्जारलोचना।
तस्य पुत्रो तितेजस्वी दम्भ परमकोपन ॥२७॥
स मायायां भगिन्यान्तु लोभं पुत्रं च कन्यकाम्।
निकृतिं जनयामास नयो क्रोध सुतो भवत् २८

अर्थ—बिल्लीके समान नेत्र वाली अत्यन्त मनको रमानेवाली मिथ्या नाम वाली अधर्म की स्त्री हुई, और उस अधर्म तथा मिथ्या नाम स्त्री के संयोग से अत्यन्त क्रोधी व महा तेजस्वी दम्भ नामक पुत्त उत्पन्न हुआ। अधर्म और मिथ्या नाम्नी स्त्री से माया नाम्नी एक कन्या भी उत्पन्न हुई, अपनी बहिन माया से दम्भने लोभ पुत्र और निकृति नाम वाली एक कन्या उपजाई पुनः उसी लोभ ने अपनी बहिन में याने निकृति मे क्रोध नाम का एक पुत्र प्रगट किया।

स हिंसायां भगिन्यान्तु जनयामास तं कलिम्।

नामहस्तघृतोपस्थं तैलाभ्यक्तां जनप्रभम् ॥२९॥
काकोदरं करालास्यं लोलजिह्वंभायनकम् ।
पूतिगन्धं द्यूतमद्यस्त्रीसुवर्णकृताश्रयम् ॥३०॥

अर्थ—क्रोध के हिंसा नाम्नी कन्या एक जन्मी उसी हिंसा के गर्भ में क्रोध ने कलिको उत्पन्न किया कलिने बाम हाथ में उपस्थ (लिङ्ग) को धारण किया तैल मिश्रित अञ्जन (कज्जल) राशि के समान इन कलिकाल महाराज के शरीर की कन्ति हुई। इनका भयङ्कर उदर, चञ्चल जिह्वा, दुर्गन्धित शरीर धारी कलि महाराज का जूआ मद्य, स्त्री याने वेश्या और सुवर्ण (सोना) में बास हुआ। हे शिष्य श्रीभागवत के प्रथम स्कन्ध में ऐसा ही लिखा है जब कलि ने राजा परीक्षित जी से रहने के लिये स्थान माँगा है तब महाराज ने जूआ, वेश्या, स्वर्ण, मद्य, मिथ्या, अभिमान, काम बैर आदि स्थान दिए हैं इस लिये कल्याणार्थी इनको कदापि न सेवन करे यथा- भागवते अ० १७॥

अथैतानि न सेवेत बुभूषुः पुरुषः क्वचित् ।
विशेषतो धर्मशीलो राजा लोकपतिर्गुरुः ।३१।

अर्थात्—इन पूर्वोक्त कार्य्यों को मोक्षार्थी सज्जन पुरुष न सेवे विशेषतः धर्म—शील राजा लोक शिक्षक होकर कभी नहीं

सेवन करे। देखो स्वर्ण के सेवनसे श्रीपरीक्षितजी नष्ट हो गये।

कल्कि पुराणे-

भगिन्यान्तु दुरुक्त्या सभयं पुत्रंच कन्यकाम्।
मृत्युं स जनयामास तयोश्च निरयोऽभवत॥३२॥
यातनायां भगिन्यान्तु लेभे पुत्रायुतायुतम्।
इत्थं कलिकुलो जाता वहवो धर्म निन्दकाः॥३३

अर्थ—कलि ने अपनी बहिन दुरुक्ति में भयानक नाम पुत्र और मृत्यु नाम्नी कन्या प्रगट किया मृत्यु और भय ने निरय नामक पुत्र को जन्माया निरय के यातना नाम्नी एक बहिन जन्म ली, इस यातना बहिन के गर्भ से निरय (नरक) ने कई हजार पुत्र को उत्पन्न किया भाव सहस्रों नरकों को प्रगट किया एवं कलिकुल में बहुत से सनातन धर्म याने तीर्थ, व्रत, श्राद्ध, मूर्त्ति पूजा, अवतार, तिलक, कण्ठी, माला, मुद्रा, के निन्दा करने वाले नास्तिक दयानन्दियों का जन्म हुआ। हे शिष्य धर्म के निंदा करने वाले सब कलियुग के सेवक लोग हैं यथा— कल्कि पुराणे-

कलिराजानुगाश्चेरुर्यूथशो लोकनाशकाः।
वभूवुः कालविभ्रष्टाः क्षणिकाः कामुका नराः॥३४
यज्ञाध्ययनदानानि वेदतन्त्र विनाशकाः।

आधिव्याधिजराग्लानि दुःखशोकभयाश्रयाः
दम्भाचार दुराचारास्तातमातृ विहिंसकाः ।
वेदहीनाद्विजा दीनाः शूद्रसेवापराः सदा ।३६।

अर्थ—लोक बिनाशक यूथ के यूथ कलिराज के अनुगामी (सेवक) लोगों ने चलायमान क्षणभङ्गुर कामुक मनुष्य शरीर को धारण किया ॥ ये सब धर्मनिन्दक यज्ञ वेदाध्ययन दान पुण्य वेद तन्त्र के नाश करने वाले आधि व्याधि जराग्लानि दुःख शोक भय का आश्रय लेकर अत्यन्त पाखण्डी दुराचारी माता पिता की हिंसा करने वाले अनुचर लोग ब्राह्मण योनि में जन्म लेकर वेद शास्त्र से विमुख विद्या हीन महा दरिद्र शूद्र जाति के सेवक हुए अर्थात् शूद्र की नौकरी करने वाले हुए।

कुतर्कवादबहुला धर्मविक्रायिणोऽधमाः ।
वेदविक्रयिणो ब्रात्यारसविक्रयिणस्तथा ।।३७।।
मांसविक्रयिणः क्रूराः शिश्नोदरपरायणाः ।
परदाररतामत्तावर्णसङ्करकारकाः ।।३८।।

अर्थ-कुतर्कवादी अर्थात् पत्थर के पूजने से क्या होता है गङ्गा आदि तीर्थों में नहाने से क्या होगा जो पानी घर में है वही पानी वहां भी है श्राद्ध करने से क्या होता है क्या साधु ब्राह्मणों को खिलाने से बाप दादा को पहुँच जाता है? क्या

ब्राह्मणों का पेट लेटर बक्स है जो यहाँ पर चिट्ठी छोड़दो और वहां मिल जायगी मगर ऐसा ही होता तो परदेश में खर्चा की क्या जरूरत है, घर में ही एक आदमी उनके नाम से खालिया करे उसका पेट भरजायगा, सो तो होता नहीं पुनः परमात्मा तो अजन्मा है, और सपर्य्यगाच्छुक्रमकायम्) इत्यादि वेद में परमात्मा को अकाय लिखा है फिर अवतार होना कैसे बनता है ? दूसरे परमात्मा आकाश की तरह सर्वव्यापी है फिर उसका आना जाना कैसे बनेगा ? आना जाना तो वहाँ होता है कि जहाँ परमात्मा न हो ऐसे २ कुतर्कवादी हजारों लोग नास्तिक हो गये ॥ केवल इन्द्रियों के कारण पेट के वास्ते मारे२ घुमने वाले उन्मत्त (पागल) परस्त्री गामी अधर्मी वर्णसङ्कर अर्थात् पुनर्विवाह करके वर्णसङ्कर उत्पन्न करने वाले मनुष्य हुए

प्रश्न--हे स्वामी जो वर्णसङ्कर जाति की उत्पत्ति पुनर्विवाह ही से होती है सो कहाँ लिखा है ?

उत्तर--हे शिष्य वर्णसङ्कर होने का कारण पुनर्विवाह ही है दूसरा नहीं सो बात मनुस्मृति जो सिद्धान्त ग्रन्थ है उसीमें लिखा है कि यह पुनर्विवाह रूप अधर्म वेन राजा ने अपने राज्य में चलाया था तब से यह पाखंड मत चल रहा है यथो--अ० ६

स महीमखिलां भुञ्जन् राजर्षिप्रवरः पुराः ।
वर्णानां सङ्करं चक्रे कामोपहतचेतनः ॥३६॥

अर्थात्—उस राजर्षि बेन ने सम्पूर्ण पृथ्वी को भोगते हुए काम के वशीभूत होकर नष्ट बुद्धि वाला पुनर्विवाह चला कर वर्णसङ्करों की सृष्टि की। इससे पुनर्विवाह करने वाले कलियुग के सेवक है।

ह्रस्वाकाराः पापसराःशठामठ निवासिनः ॥
षोडशाब्दायुषः श्यालबान्धवानीचसङ्गमाः ॥४०
विवाहकलहक्षुब्धाः केशवेश विभूषणाः।
कलौ कुलीना धनिनः पूज्या वार्द्धुषिकाद्विजाः ४१
सन्यासिनो गृहासक्ता गृहस्थास्त्वविवेकिनः।
गुरुनिन्दापराधर्मध्वाजिनः साधुवञ्चकाः ॥४२॥

अर्थ—वे पूर्वोक्त कलि सेवक कैसे हुए कि ह्रस्वाकार पाप परायण शठ मठ वासी षोडश वर्षीय आयुवाले भार्या-बन्धु (शाला) को बन्धु मानने वाले नीच प्रसङ्ग प्रिय हुए॥ विवाद याने व्यर्थ बकबाद करने वाले जैसे कि दयानन्दीय लोग हैं, बकवाद और लड़ाई के बड़े लोभी हुए केश वेष परायण याने काफ़र चोटिया के सुधारने वाले धनी, कुलीन और ब्याजग्राही (सूद खानेवाले) ब्राह्मण कलि में पूज्य हुए, सन्यासी गृहस्थ धर्मानुरागी हुए और गृहस्थ बिचार हीन हुए, सकल मनुष्य गुरु निन्दापरायण हुए और धर्मध्वजी साधुवञ्चक हुए॥

प्रतिग्रहरताः शूद्राः परस्वहरणा दशः ।
द्वयोः स्वीकारमुद्वाहः शठे मैत्रीवदान्यतः ॥४३

प्रतिदाने क्षमाशक्तौ विरक्तिकरणाक्षमे ।
वाचालत्वे च पाण्डित्ये यशोऽर्थेधर्मसेवनम् ॥४४

धनाढ्यत्वं च साधुत्वे दूरे नीरे च तीर्थता ।
सूत्रमात्रेण विप्रत्वं दण्डमात्रेण मस्करी ॥४५॥

अर्थ—शूद्र दान प्रतिग्रह और अन्य के सर्वस्व हरनेवाले हुए स्त्री पुरुष की सम्मति ही बिवाह हुई लोग सब शठ प्रिय हुए लोग प्रतिदान में दानशीलता का परिचय देने लगे न्यायकर्त्ता गण अपराधियों को दण्ड देने में असमर्थ होकर क्षमाशील हुए॥ लोग दुर्बल के प्रति विरक्ति प्रगट करने लगे बहुत बोलने ही वाले पंडित हुए लोग यश प्राप्ति की इच्छा धर्म का प्रचार करने वाले हुए। धनवान पुरुष ही साधु हुए दूरस्थ जल ही तीर्थ हुआ यज्ञोपवीत मात्र में ब्राह्मणत्व रहा एवं दण्ड केवल सन्यासियों का चिन्ह रह गया।॥

अल्पशस्या वसुमती नदी तीरेऽवरोहिता ।
स्त्रियो वेश्यालापसुखाः स्वपुंसा त्यक्तमानसाः ४६
परान्नल्लोलुपा विप्राश्चाण्डालगृहयाजकाः ।

स्त्रियो वैधव्यहीनाश्च स्वच्छन्दाचरणप्रिये ॥४७
चित्रबृष्टिकरा मेघा मंदशस्या च मेदिनी ।
प्रजा भक्षा नृपा लोकाः करपीडाप्रपीडिताः ४८
स्कन्धे भारं करे पुत्रं कृत्वा क्षुब्धाः प्रजाजनाः ।
गिरिदुर्गवनं घोरमाश्रयिष्यंति दुर्भगा ॥ ४९ ॥

अर्थ—पृथ्वी थोड़ा अन्न उपजाने लगी नदी किनारे बहने लगी स्त्रियां वेश्यालाभ के सुख अनुभव करने लगी स्त्रियों की प्रीति पति से जाती रही । परान्नलोलुप ब्राह्मण लोग चाण्डालों के घरमें पूजनादि करने लगे । स्त्रियां बिधवा हीन स्वच्छन्द याने स्वतन्त्र घूमने लगी । मेघोंने खण्ड बृष्टि करनी आरंभ की पृथ्वी मंद याने थोरा अन्न उपजाने वाली हुई राजा प्रजाके भक्षक हुए और प्रजा कर पीड़ा से व्याकुल होगई अभागी प्रजा कष्ट से अत्यन्त कातर होकर स्कन्ध (कन्धे) पर बोझ हाथ में लेकर कठिन पर्वत बन का आश्रय ग्रहण करने लगी भाव प्लेगके मारे घर त्याग जंगली बन गये ।

मधुमांसैर्मूलफलैराहारैः प्राणधारिणः ।
एवं तु प्रथमे पादे कलेः कृष्णविनिन्दकाः ॥५०

द्वितीये हुन्नामहीनास्तृतीये वर्णसङ्कराः ।
एकवर्णाश्चतुर्थे च विस्मृताच्युतसत्क्रियाः ।।५।।

अर्थ—सब लोग मधु मांस कन्द मूल फलादि खाकर प्राण धारण करेंगे इस प्रकार के मनुष्य श्रीरामकृष्णादि के निन्दा करने वाले कलियुग के प्रथम चरण में होंगे द्वितीय चरण में भगवत नाम से रहित होजांयगे तृतीय चरण में सब वर्णसङ्कर होजांयगे चौथे चरण में सब एक वर्ण हो जांयगे और भगवान के पूजन स्मरणादि सत्क्रिया भूल जांयगे आव जब कहीं धर्म नहीं रहजाता है तब श्री कल्कि अवतार होता है और सब यमनों को नाश कर फिर सत्ययुग की स्थापना करते हैं हे शिष्य इस प्रकार से कलियुग की उत्पति व लक्षण धर्म शास्त्र में लिखे हैं और भी सब पुराणों में तथा रामायणादि ग्रन्थों में कलियुग के धर्म विस्तार से लिखे हैं यहां विस्तार से नहीं कहा।

प्रश्न—हे स्वामीजी दयानन्द कौन था और कहाँ पर हुआ है सुनते हैं कि दयानन्द बड़ा भारी विद्वान था जिसने यजुर्वेदादि पर भाष्य भी किया है।

उत्तर—हे शिष्य दयानन्द कौन था और कहाँ पर हुआ अगर यह जानने की इच्छा हो तो (दयानन्द छल कपट दर्पण) नामक ग्रन्थ को अवश्य देखो जिसमें दयानन्द का सर्व वृत्तान्त पूर्णतया लिखा है और तुम जो कहो कि दयानन्द बड़ा भारी

विद्वान था जिसने वेद पर टीका किया है, तो वेद पर भाष्य करने से कोई विद्वान नहीं हो सक्ता है हे शिष्य वेद पर भाष्य तो रावण ने भी किया है तो क्या रावण विद्वान था रावण को महर्षि किसी शास्त्र में लिखा नहीं है सर्वत्र राक्षस ही लिखा है काहे से कि विद्वान होकर जो शास्त्र से विरुद्ध कर्म करता है वह राक्षस कहा जाता है ऐसा नीति शास्त्र का सिद्धांत है यथा—

सरसो विपरीतश्च सरसत्वं न मुञ्चति ।
साक्षरा विपरीताश्चेद्राक्षसा एव केवलम् ॥ ५२ ॥

अर्थ—सरस शब्द का विपरीत याने उलटा होने पर भी सरस ही बना रहता है और यदि साक्षरा शब्द उलटा हो जावे तो केवल राक्षस ही हो जाता है भाव और सब विपरीत होने पर भी सरस ही बना रहता है और यदि विद्वान होकर विपरीत हो जावे भाव शास्त्र से विरुद्ध कथन करे, अथवा अर्थ का अनर्थ करे कि वेद मे श्राद्ध मूर्त्ति पूजा, तीर्थ, व्रत, अवतार, नहीं लिखा है इस तरह से लोगों को धोखा देवे तो उसको राक्षस ही जानना चाहिये हे शिष्य इस नीति शास्त्र के वचन से तुम जान लो कि दयानन्द कौन था।

प्रश्न—हे स्वामीजी दयानन्द को तो सब लोग महर्षि कहते कहते हैं सो क्यों कहते हैं।

उत्तर—हे शिष्य दयानन्द को महर्षि केवल दयानन्द के चेले ही लोग कहते हैं दूसरे नहीं कहते चेला लोग दयानन्द को जो चाहे सो कहैं कहने से क्या होगा जैसे कोई पुरुष अपने पुत्रका पृथ्वीपालादि नाम धर देता है तो क्या वह पृथ्वीपाल थोड़ेही हो सक्ता है इसी प्रकार से चेला लोग चाहे महर्षि कहैं चाहे ब्रह्मर्षि कहैं चाहे देवर्षि कहैं कहनेसे क्या होता है हे शिष्य दयानन्द तो मामूली पण्डित था।

प्रश्न--हे स्वामी जी दयानन्द तो केवल वेद का माननेवाला था और उनके शिष्य लोग भी वेद ही को मानते हैं और देखते हैं कि हवन भी करते हैं फिर दयानन्द को वेद से विरुद्ध कैसे माने ?

उत्तर—हे शिष्य जिस समय में श्री हनुमान जी लङ्का में गये तो क्या देखा कि सब राक्षसों के घर २ वेद पाठ और होम हो रहा है यथा—

अग्नि होत्रं च वेदाश्च रांक्षसानां गृहे गृहे।
क्षमा सत्यं दया शौचं तपस्तेषां न विद्यते।५३।

अर्थ– अग्निहोत्र याने होम और वेदों का पाठ सब राक्षसों के घर २ में देखा परंतु क्षमा सत्य दया द्विविधा शौच और तपश्चर्य्या उन राक्षसों में नहीं देखा यह कर्म विल्कुल नहीं है इसीसे सब राक्षस कहे जाते थे हे शिष्य इन आप्तोपदेशक

महर्षि श्री वाल्मीकि जी के वचन से जान पड़ता है कि सब राक्षस अग्निहोत्री और वेदपाठी थे परन्तु वेद विरुद्ध होने से राक्षस कहे गये इस प्रकार से इन लोगों को भी जानना चाहिये क्योंकि दयानन्द भी महा मिथ्यावादी था सो दयानन्द का मिथ्यार्थ प्रकाश (सत्यार्थ प्रकाश) नाम ग्रन्थ पढ़ कर देखो और दयानन्द दयालु कैसा था कि यजुर्वेद अ० १३ म० ४८ के भावार्थ में लिखा है कि जिन गौ बैल आदि से दूध घृत खेती आदि उपकार हो उनको कभी ना मारे अगर जो जन इनको मारे तो न्यायकारी राजा उसको दण्ड देवे और जङ्गल में रहने वाले नील गाय आदि जो प्रजा की हानि करें वे मारने योग्य हैं यहाँ पर नील गाय का हत्या करना लिखा है ऐसा दयालु था यथा नाम तथा गुण यहाँ पर दयानन्द कहना चाहिये कि हय हन्साया धातु से हिसानन्द कहना चाहिये और शौच (शुद्धि) तो ऐसी है कि भङ्गी चमार मुसलमानों को भी ब्राह्मण बनाकर उसके साथ खा लेना ॥ १ ॥ तपश्चर्य्या तो दयानन्द में ऐसीथी कि ४० वर्षमें ही समाप्त हुई। हे शिष्य शास्त्रका सिद्धांत है कि तप से आयु बढ़ती है और पाप से घटती है इसे दयानन्द ने भी लिखा है कि पूर्ण ब्रह्मचर्य्य होने से १२० वर्ष की आयु होती है अतः यह देखना चाहिये कि जो दयानन्द पूर्ण ब्रह्मचारी तथा सन्यासी होता तो क्यों ४० वर्ष में ही मरता। हे शिष्य कहाँ तक कहें ऐसी दशा ईश्वर कभी किसी की न करे

प्रश्न—हे स्वामीजी दयानन्द के चेला तो कहते हैं कि

स्वामीजी को ब्राह्मणों ने विष (ज़हर) देदिया था इसी से ४० वर्ष की अवस्था में मरे।

उत्तर--हे शिष्य यह तो केवल दयानन्दियों की बात बनाना है जब सनातनी लोग इस प्रकार की बातें सुनाते हैं तब वे लोग शर्म के मारे ऐसे ही कह दिया करते हैं इसी प्रकार से जब कहो कि रावण ने भी वेद पर भाष्य किया है परन्तु था राक्षस तब वे लोग क्या बोलेंगे कि रावण नामक पण्डित कश्मीरमें हुआ है उसने वेद पर भाष्य किया है राक्षस रावणने नहीं किया है सब झूंठा है ऐसे ही जब कहो कि तुम्हारे मत के भारी पंडित श्रीभीमसेन शर्माजी तुमारे मत को त्याग कर सनातनी हो गये तो क्या कहेंगे कि वह तो दश हजार रुपैया खा गया इसके डरके मारे सनातनी बन गया, हे शिष्य इस प्रकार की धूर्तता की बातें कर दिया करते हैं जैसे गुरु स्वामी दयानन्द तैसे ही चेला शर्मा।

प्रश्न—हे स्वामीजी पाखंडी और नास्तिक किसको कहते हैं सो कहिये।

उत्तर—हे शिष्य पाखंडियों का लक्षण शास्त्र में ऐसा कहा है यथा—

पालनाच्च त्रयी धर्मः पाशब्देन निगद्यतेः।
तं खण्डयन्तियेतस्मात्पाखण्डास्तेन हेतुना ५४

अर्थात्—तीनों वेद के कहे हुए जो धर्म हैं तीर्थ, व्रत, श्राद्ध, मूर्ति, अवतारादि के मानने वाले जो सनातनी हैं उनका जो खंडन करे उसको पाखंडी कहते हैं ऐसेही नास्तिकों के लिये स्वयं मनुजी के वचन हैं यथा २ अध्याय श्लोक ११ ॥

योऽवमन्येत ते मूले हेतुशास्त्राश्रयाद्द्विजः ।
ससाधुभिर्बहिष्कार्य्यो नास्तिको वेदनिन्दकः ५५

अर्थात्--जो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य हेतु (तर्क) से श्रुति स्मृति का अपमान करता है, तथा वेद की निन्दा करताहै, उन नास्तिकों को साधु, श्रौत, स्मार्त, कर्मों से बाहर करदे । इस प्रकार से मनुजीने कहा है सोई नास्तिक दयानन्द हुआ है।

प्रश्न--हे स्वामीजी दयानन्दने वेदकी तो निन्दा नहीं किया है वह तो वेद को मानता ही था फिर दयानन्द नास्तिक कैसे हो सक्ता है सो कृपा कर कहिये।

उत्तर—हे शिष्य मनुजी ने उसी द्वितीयाध्याय में ऐसा कहा है।

वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम् ।
आचारश्चैव साधूना मात्मनस्तुष्टिरेव च ॥५६॥
वेदः स्मृतिसदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः ।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ॥५७॥

अर्थ—सम्पूर्ण वेद याने सामवेद, ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्वणवेद ये चारो वेद और स्मृति मन्वादि अष्टादशस्मृति तथा १३ प्रकार के शील जो हारीत स्मृति में कहा है यथा—(ब्रह्मण्यता) १ ब्राह्मणों की सेवा करना (देव पितृ भक्तिता) २ देवताओं और पितरोंका पूजन श्राद्ध करना (सौम्यता) ३ सब में समता रखनी (अपरोपतापिता) ४ औरों को दुःख न देना (अनसूयता) ५ किसी के साथ कोई प्रकार का द्वेष न करना यथा अत्रिस्मृती-

न गुणान्गुणिनो हन्तिस्तौतिचान्यगुणानपि ।
न हसेच्चान्यदोषांश्च सा ऽनसूया प्रकीर्त्तिता५८

अर्थ—दूसरे के गुणको जो नाश नहीं करते हैं, औरोंके गुणों की प्रशंसा करते हैं और न दूसरे के दोषों को देखकर हँसते हैं, उसको अनुसूया कहते है ॥ पुनः (मृदुता) ६ सबसे कोमलता धारण करना (अपारुष्यत्वं) ७ किसी से कठोर वचन न बोलना (मैत्रता) ८ सब से मित्रता रखनी (प्रियवादित्वं) ९ सब से प्रिय बोलना (कृतज्ञता) १० उपकार को मानना भूलना नहीं (शरण्यता) ११ शरणागत की रक्षा करनी (कारुण्य) १२ सब के ऊपर दया करनी (प्रशांतिश्चेति त्रयोदशविधं शीलम्) १३ अत्यन्त शांति को धारण करनी ये १३ प्रकार के शील हैं और साधुओं का आचार विचार तथा मन की रुचि यह सब धर्म में मूल प्रमाण है । फिर भी उसी को कहते हैं कि वेद स्मृति सदाचार याने साधुओं के आचरण और अपने

मनकी रुचि इन चारों की श्रुतियों ने धर्म का साक्षात् प्रमाण कहा है। इन चारों को जो न माने वही नास्तिक है। हे शिष्य दयानन्द और दयानन्द के चेला अपने ग्रन्थों में जहाँ देखो तहाँ (वेदोऽखिलो धर्ममूलम्) यही लिखते हैं और मानते हैं, अगर पूछो कि स्मृति, १३ प्रकार का शील साधुओं का आचार मनकी रुचि ये सब क्या धर्म के मूल नहीं हैं केवल वेद ही धर्म का मूल होता तो- स्मृतिशीले च तद्विदाम् ॥ आचारश्चैव साधूना- मात्मनस्तुष्टिरेव च ॥ लिखने का प्रयोजन ही क्या था जो तुम एक चरण तो मानते हो तीनचरण नहीं, ये क्या बात है। मानते हो तो सबको मानो नहीं तो कुछ भी नहीं मानो, सब वेद ही से सिद्ध करो मतलबी यार क्यों बनते हो इसी लिये मनुजी का कहना सभी सत्य है यथा – (यत्किञ्चन मनुरवदत्तद्भेषजम्) इति श्रुतिः ॥ इस श्रुति सिद्धान्त से मनुजी ने जो कुछ कहा है वह सभी सत्य है इसमें सन्देह नहीं।

प्रश्न—हे स्वामी जी वेद स्मृति तथा १३ प्रकार के शील यह तो प्रमाण रूप हुआ इसमें तो सन्देह नहीं केवल साधुओं का सदाचार और मनकी रुचि क्या वस्तु है सो कृपा कर कहिये।

उत्तर—हे शिष्य साधुओं का जो भजन स्मरण चाल चलन है वह वेद ही के तुल्य प्रमाणिक है यथा—विष्णु पुराणे अन्ने अ० १६ ॥

साधूनां हृदयं धर्मा वाचो देवाः सनातनाः।
कर्मक्षयाणि कर्माणि यतः साधुर्हरिःस्वयम् ५६
मन्ये न भौतिकोदेहो वैष्णवस्य जगत्त्रये।
यथाऽवतारे कृष्णस्य सतो दुष्टविनिग्रहे ॥ ६० ॥

अर्थ - साधुओं के हृदय धर्मरूप है वचन सनातन देव नारायण हैं जिन के कर्म ही सब कर्मों के नाश कर्त्ता हैं। इस लिये साधु स्वयं भगवान हैं। साधुओं को पञ्चतत्व याने प्राकृत देहधारी त्रिलोकी नहीं मानते हैं जैसे भगवान श्रीकृष्णजी का अवतार है दुष्टों को दण्ड के वास्ते तैसे ही साधु वैष्णवों का अवतार है दुष्टों की दुष्ट बुद्धि सुधारने के लिये ऐसाही और भी स्मृतियोंमें लिखा है कि (समश्चापिसाधुना प्रमाणंवेदवद्भवेत्)
पुनः विष्णु पुराणे—

साधवः क्षीणदोषास्तु सच्छब्दः साधुवाचकः।
तेषामाचरणं यत्तु ससदाचार उच्यते ॥६१॥

पुनः भविष्य पुराणे—

आचारप्रभवो धर्मस्सन्तश्चारलक्षणाः।
साधूनां च यथा वृत्तं ससदाचार इष्यते ॥६२॥
तस्मात्कुर्य्यात्सदाचारं य इच्छेद्भूतिमात्मनः।

अर्थ--साधु सब दोषों से रहित होते हैं और " सद्भावे साधुभावे " इत्यादि गीता के वचन से सत् शब्द साधु वाचक है उन साधुओं के जो आचरण हैं उन्हें सदाचार कहते हैं ॥ आचारः प्रथमोधर्मः सर्वेषामिति निश्चयः । आचार से धर्म होता है और साधु आचार के लक्षण हैं इससे साधुओं की जो वृत्ति (क्रिया) है वही सदाचार कहा जाता है उस से जो कोई कल्याण चाहै वह सदाचार करे । हे शिष्य इसी प्रकार से बहुत कहा है इससे शिष्ट पुरुषों की आज्ञा और आचरण प्रमाण है सो श्रीगोस्वामी जी ने रामायण में विस्तार से कहा है यथा--

मातु पिता प्रभु गुरु की बानी । बिनहि बिचारि करिय शुभजानी
परशुराम पितु आज्ञा राखी । मारी मातु लोक सब साखी ॥
तनय जजातिहिं यौवन दयऊ । पितु आज्ञा अघ अयश न भयऊ॥

इत्यादि वही बात युधिष्ठिर जी ने माता की आज्ञा से एक स्त्री द्रौपदी के साथ में पाँचों भाई मिलकर शादी की। कुछ दोष न हुआ इससे श्रेष्ठ पुरुषों की आज्ञा भी धर्म का मूल है और मनकी रुचि यह है कि जैसे ब्राह्मणों के हाथ का भोजन करने में कोई दोष नहीं है परन्तु क्रिया हीन हो अथवा मद्य-मांस के पीने खाने वाले हो तो मन नहीं मानता है यहाँ तक कि उस ब्राह्मण के जल पात्रादिक भी लेने की इच्छा नहीं होती है इसी लिये (मनः पूतं समाचरेत) लिखा है। हे शिष्य यहाँ पर मन रुचि के अर्थ पाप कर्म नहीं जानना चाहिये, वह तो

अधर्म है वहाँ तो धर्म का सिद्धान्त मूल दिखा रहे हैं इससे धर्म सम्बन्धी कामों में (स्वस्य च प्रियमात्मनः आत्मनः। स्तुष्टि रेव च। मनः पूतं समाचरेत) इत्यादि वचनों के अर्थ जानने चाहिये।

प्रश्न--हे स्वामी जी आज कल संसार में नास्तिक पाखंडी लोग होगये हैं और दिन २ होते जाते हैं वे लोग श्रीरामकृष्णादि को मनुष्य जान कर निंदा करते हैं सो क्या कारण है।

उत्तर--हे शिष्य श्रीरामकृष्णादि के न मानने वाले और निंदा करने वाले तो सत्ययुग त्रेता द्वापर में ही हिरण्याक्ष, हिरण्यकशिपु, रावण, कंस, शिशुपाल, दन्त वक्त्रादि, दुष्ट हुए हैं तो आज कलियुग में हुए तो क्या आश्चर्य है। हे शिष्य यह सब केवल भगवत की माया है। स्कान्द पुराणोक्त श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण के माहात्म्य में लिखा है।

कलौ वेदोक्तमार्गाश्च नश्यन्तीतित्वयोदितम्।
अधर्मनिरतानां च यातनाश्च प्रकीर्तिताः॥६३
घोरे कलियुगे प्राप्ते बेदमार्गबहिष्कृते।
पाखण्डत्वं प्रसिद्धं वै तत्सर्वं परिकीर्तितम्॥६४
कामार्ता ह्रस्वदेहाश्च लुब्धा अन्योन्यतत्पराः।
कलौ सर्वे भविष्यंति स्वल्परायो बहुप्रजाः॥६५

स्त्रियः स्वपोषणपरा वेश्या लावण्यशालिनः ।
पतिर्वाक्यमनादृत्य सदाऽन्यगृहतत्पराः ॥६६॥

अर्थ—शौनकादि श्रीसूतजी से बोले कि आपने कहा कि वेदोक्तमार्ग सब कलियुग में नष्ट हो जाँयगे और अधर्मियों के लिये नाना प्रकार की यम यातना भी आप ने वर्णन किया ॥ घोर कलियुग के प्राप्त होने पर वैदिक मार्ग से रहित होने पर सर्वत्र पाषण्डपना प्रसिद्ध हो जायगा सो भी आपने कहा ॥ सब लोग काम करके दुःखी होजाँयगे और छोटे कद वाले मनुष्य परस्पर लोभी हो जाँयगे कलियुग में सब स्वल्प (थोरी) अवस्थावाली बहु प्रजा होगी ॥ अन्न की पैदायश कमहोगी सब लोग भूखे मरेंगे स्त्री सब अपना पोषण पालन किया करेंगीं और वेश्या रूपवती होंगी जिस से कि मूर्ख लोग उनकी सेवा (गुलामी) करेंगे ॥ स्त्रियाँ अपने पति के वचन अनादर करके पराये घर में रात्रि दिन रहा करेंगी ॥

अट्टशूलाजनपदाः शिवशूलाश्चतुष्पथाः ।
प्रमदाः केश शूलाश्च भविष्यन्ति कलौयुगे ६७

अर्थ—ब्रह्मांड पुराण में लिखा है कि कलियुग में ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, चारो वर्ण अट्ट शूल (अन्न बेंचने वाले) हो जाँयगे और चतुष्पथ ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ, संन्यासी, ये सब शिव (वेद) वेचने वाले होंगे और स्त्रियां सब केश (भग) वेचने वाली हो जाँयगी ॥ पुनः स्कान्दे—

दुःशीला दुष्टशीलेषु करिष्यन्ति सदास्पृहा।
असंवृता भविष्यन्ति पुरुषेषु कुलाङ्गनाः ॥६८॥
परुषानृतभाषिण्यो देहसंस्कार वर्जिता।।
वाचालाश्च भविष्यन्ति कलौ प्राप्ते तु योषितः ६६
भिक्षवश्चापि मित्राणि स्नेहसम्बन्धयन्त्रिताः।
अन्योपाधिनिमित्तेन शिष्यानुग्रहलोलुपा।।
पाषण्डालापनिरताः पाषण्डजन सङ्गिनः ॥७०॥

अर्थ—सब स्त्रियां दुष्ट स्वभाववाली हो जाँयगी और दुष्ट शील पुरुषों की सदा इच्छा किया करेंगी तथा, बड़े२ कुलवाली स्त्रियां पुरुषों के सामने बेपर्दा होंयगीं भाव खानदान घर की स्त्रियाँ जेन्टिलमैन बन कर बेशर्म घूमाकरेगी, सो बात लाहौर आदिक शहरोंमें प्रसिद्ध है। हे शिष्य यह बात केवल आज काल के दयानन्दियों में विशेष है।

कलियुग में सब स्त्रियां कटु बोलनेवाली होंगी और देह संस्कार अर्थात् स्नानादि कभी भूल कर भी न करेंगी, अगर करेंगी तो साबुन से चेहरा मल २ कर नहायेगी सो भी लाहौर ही आदिक शहरों में है ॥ कलियुग के आते ही सब स्त्रियां वाचाल यने बहुत बोलने वाली होंगी और सबके साथमें लड़ाई किया करेंगी रात्रि दिन झूंठ बोलेंगी ॥ कलियुग में संन्यासी स्नेह में यन्त्रित (फंस) जाँयगे और महावितण्डावाद में

पड़ कर कुटियो बनाके शिष्यादि करके द्रव्योपार्जन करेंगे और जो रुपैया पूजा देगा उस शिष्य पर बड़ी कृपा होगी नहीं तो बात भी न करेंगे, तथा चेला भी महन्ती के लिये गुरुका गला घोट कर अथवा विष (जहर) देकर मार डालेंगे यथा—

कौड़ी लागी मोह बस, करहिं विप्र गुरु घात ।
हरहिं शिष्य धन शोक न हरई । सो गुरु घोर नरक में परई ॥

इत्यादि कहा है अर्थात् जैसे गुरु तैसे ही चेला दोनों पाषण्डी होंगे रात्रि दिन गपाष्टक मारेंगे और पाखंडियों के साथ में बैठकर इश्कबाजी की बात किया करेंगे कहीं मोकदमाबाजी किया करेंगे यथा षट्पदी शङ्कराचार्य्यः ॥

कुशलाः लोकवार्त्तायां बृत्तिहीनाः सुरागिनः ।
कलौ वेदान्तिनः स्सर्वे फाल्गुने वालका इवः ७१

अर्थात्—लोक वार्त्ता में कुशल होंगे और बृत्ति (वैराग्य) से हीन होंगे शब्द स्पर्श रूप गंधके रगीले होंगे इस प्रकार से कलियुग में सब वेदांती याने परमहंस संन्यासी फागुन के बालकों की तरह उन्मत्त (पागल) हो जांयगे भाव जैसे होली में बालक लोग गालियां दिया करते हैं होता जाता कुछभी नहीं तैसे ही कलियुगी ज्ञानी "अहं ब्रह्मास्मि" कहा करेंगे । हे शिष्य ऐसे ही श्रीगोस्वामी जी ने रामायण में कहा है कि

दोहा—ब्रह्मज्ञान बिनु नारि नर, कहहिं न दूसरि बात ।
कौड़ी लागि लोभ बश, करहिं विप्र गुरु घात ॥ पुनः स्कान्दे-

यदा द्विजाभविष्यंति तदा बृद्धिं गतःकलिः ।
विप्रवंशोद्भश्रेष्ठ उपवीतं शिखांत्यजेत ॥७२॥
कथं तन्निष्कृतिं याति वदसूतमहामते ।
राक्षसाः कलिमाश्रित्य जायन्ते ब्रह्मयोनिषु ॥७३
परस्परं विरुध्यन्ति भगवद्धर्म वञ्चकाः ।
द्विजानुष्ठानरहिता भगवद्धर्मवर्जिताः ॥ ७४ ॥
कलौ विप्राभविष्यंति कंचुकष्णीष धारिणः ।
घोरे कलियुगे ब्रह्मन् जनानां पापकर्मणाम् ॥७५
मनःशुद्धिविहीनानां निष्कृतिश्च कथं भवेत् ।
शूद्रहस्तोदकं पक्कं शूद्रैश्च सह भोजनम् ।
शौद्रमन्नंतथास्नीयात्कथं शुद्धिमवाप्नुयात् ७६

अर्थ—जैसे ब्राह्मण होंगे तैसे कलियुग की बृद्धि होगी काहे से कि उत्तम ब्राह्मण कुल में जन्म लेकर यज्ञोपवीत और शिखा (चोटिया) को त्याग देंगे। उसकी गति कैसे होगी सो हे महामते श्री सूतजो कहिये। राक्षस लोग कलिके आश्रय लेकर ब्राह्मण कुल में जन्म लेंगे और परस्पर विरोध करने वाले भगवद्धर्म जो वैष्णवधर्म है अर्थात् कंठीमाला तिलक धनुषबाण शंख चक्रादि के वंचक याने छलने वाले होंगे भाव जहां २ वैष्णव सिद्धांत है उसको कपोल-कल्पित कह कर निकाल देंगे और

पखंड मतके श्लोक बनाकर मिला देंगे। कहीं वैराग्य-धर्म का निंदा लिख देंगे। कहीं अर्थ का अनर्थ ही कर देंगे। ऐसे धूर्त होंगे। सब ब्राह्मण अनुष्ठान से रहित हो जाँयगे और भगवद्धर्म जो भगवत भजन स्मरण, पूजा, पाठ, तिलक, माला,धनुष-बाण शङ्ख,चक्रादि,से रहित होजाँयगे। कलियुग में सब ब्राह्मण कञ्चुक (अङ्ग रखा) उष्णीष (पगड़ी) को धारण करने वाले होंगे। आब सब ब्राह्मण अङ्गा, टोपी, कुरता, कमीज़, कोट, वास्कट, पतलून, पायजामा, मोजा, बूट आदि के पहरने वाले होंगे। हे शिष्य दयानन्द तो संन्यासी होकर कोट बूट पहनता था जैसा यहाँ लिखा है तैसा ही दयानन्द भी था इसीसे नास्तिक था और तीर्थ व्रत श्राद्ध मूर्ति पूजा श्रीरामकृष्णादि अवतारों का तो पूरा दुश्मन था। इस प्रकार से कलियुग में सब ब्राह्मण पाप कर्मों में निमग्न हो जाँयगे जब कि मनही शुद्ध नहीं है तो उन लोगों की गति कैसी होगी सो कहो। शूद्र के हाथ के खाने पीने वाले तथा शूद्र के साथ बैठ कर भोजन करने वाले और शूद्र के अन्न खाने से कैसे शुद्धि होगी हे शिष्य दयानन्दीय लोग चमार, भङ्गी, अहीर, गडरिया, पासी, कोरी, मुसल्मान, सबको ब्राह्मण बनाकर साथ में खा पी लेते हैं कहो तो उन नीचों का उद्धार कैसे होगा वाहरे कलियुग तुमको धन्य है॥ पुनः—

कृते तु दानवा प्रोक्ता त्रेतायां राक्षसा स्मृताः।
द्वापरे दुष्टराजानः कलौ दैत्याश्च ब्राह्मणाः॥७७

अर्थात्—सत्ययुग में मधु कैटभ, हिरण्याक्ष, हिरण्यकशिपु आदि को दानव कहा हैं त्रेतामें रावणादिक राक्षस कहा है और द्वापर में दुष्ट राजा कंस, शिशुपाल, दन्तवक्त्रादि हुआ है कलियुग में ब्राह्मण ही दैत्य हैं कौन ब्राह्मण श्रीरामकृष्णादि की जिन्होंने निन्दाकी है। इससे यह दिखाया कि युग २ में नास्तिक राक्षसों का अवतार हुआ करता है । इससे ब्राह्मण हो चाहे क्षत्रिय हो चाहे वैश्य हो अथवा शूद्र हो जो राम कृष्णादिक को न मानने वाले हैं वे सब राक्षस ही हैं। शिष्य सर्वत्र धर्मका प्रचार देखकर यमराज ने दूतों को आज्ञा दी कि तुम सब मृत्युलोकमें जाकर वेद विरुद्ध धर्म कथन करो। वेही सब नास्तिक के रूप धारण किये हैं ।

नानारूपधराः दूताः जीवानां ज्ञानहारकाः ।
कालाज्ञांसमनुप्राप्ता विचरन्ति महीतले ॥७८॥

अर्थ—काल की आज्ञा पाकर वेही यमके दूत पाखंडियों का नाना रूप धारण कर जीवों के ज्ञान हरण करने वास्ते पृथ्वी में घूमते हैं। वेही नास्तिक हैं इसमें कोई भी सन्देह नहीं है। हे शिष्य श्रीगोस्वामी जी ने भी श्रीरामायण जी में कहा है कि—

मानहिं मातु पिता नहिं देवा। साधुन से करवावहिं सेवा ॥
जिन के यह आचरन भवानी। ते जानहु निशिचर सम प्रानी ॥

इत्यादि राक्षसों के सींग पूछ नहीं होती केवल कर्म राक्षसों

के करने से राक्षस कहे जाते हैं पेले ही श्रीगीताजी में श्रीकृष्ण-चन्द्र भगवान के वचन हैं यथा अध्याय ७ श्लोक १५ ॥

न मांदुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराऽधमाः ।
माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः ॥

अर्थ—श्रीभगवान् कहते हैं कि जिनका मायासे हरा गया है ज्ञान वे असुर याने दैत्य भाव को प्राप्त हुए नीच कर्म करने वाले मनुष्यों में अधम (पापी मूर्ख) मेरे को नहीं भजते हैं। फिर भी सुनो अध्याय ६ श्लोक ११ । १२ ॥

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रिताः ।
परं भावमजानन्तो ममभूतमहेश्वरम् ॥ ७६ ॥
मोघाशा मोकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः ।
राक्षसीमासुरी चैव प्रकृतिं मोहनीं श्रिताः ॥८०॥

अर्थ—जो राक्षसी और आसुरी मोह करने वाली प्रकृति नाम स्वभाव को धारण कर रहे हैं वे दुष्ट निष्फल आशा वाले निष्फल कर्म वाले, निष्फल ज्ञानवाले, भ्रष्ट चित्त वाले, मनुष्य सर्व भूतों के ईश्वरों के भी ईश्वर एव मेरे प्रभाव को न जानते हुए मूर्ख मनुष्य शरीर में स्थित मेरी अवज्ञा (अपमान) करते हैं। भाव केवल मनुष्य जानकर निरादर करते हैं ॥ हे शिष्य इन श्रीगीताजी के वचनोंसे यही सिद्ध हुआकि जो श्रीराम कृष्णादि

अवतारों को नहीं मानते हैं वे राक्षस ही हैं इसमें कोई भी सन्देह नहीं।

प्रश्न—हे स्वामीजी श्रीरामकृष्णादि अवतारों को न मानना इसका कारण क्या है।

उत्तर—हे शिष्य दैवी आसुरी दो सम्पत्ति हैं। उनमें आसुरी सम्पत्ति वाले की बुद्धि राक्षसी हो जाती है, वे अपने ही को (ईश्वरोहमहंभोगी सिद्धोहंबलवान्सुखी) इत्यादि श्रीगीताजी के वचन से (अहं ब्रह्मास्मि सोहं) कहा करते हैं और श्रीरामकृष्ण जी के भक्ति से हाथ धो बैठते हैं और दैवी सम्पत्तिवाले जो महात्मा लोग हैं, वे प्रभु के भजन स्मरण करते हैं जैसा कि श्रीगीताजी में कहा है यथा-अध्याय ९ श्लोक १३। १४॥

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादि मव्ययम्॥८२
सततं कीर्त्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढव्रताः।
नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते ८३

अर्थ—हे अर्जुन दैवी प्रकृति को प्राप्त हुए महात्मा लोग सब भूतों का आदि और अविनाशी जान के अनन्य मन होकर और देवतान्तर को छोड़कर केवल मेरेको ही को भजते हैं। कैसे भजते हैं कि निरन्तर मेरा कीर्त्तन करते हुए और दृढ़

सङ्कल्प किये हुए तथा मेरी प्राप्ति के वास्ते यत्न करते हुए और भक्ति करके मेरे को नमस्कार करते हुए नित्य मेरे समागम की इच्छा करनेवाले मेरी उपासना करते हैं। हे शिष्य इस से जब तक कि प्रभु की कृपा न हो तब तक उनके चरण कमलों में प्रीति होनी कठिन है इस बात को राक्षसों के अवतार नास्तिक लोग क्या जानें, आज काल कलि का प्रभाव प्रबल हो रहा है इस लिये नास्तिकों की वृद्धि होती जाती है, और सनातनधर्म व सद्ग्रन्थों का नाश होता जाता है जैसा कि श्रीगोस्वामी जी ने कहा है यथा—

हरित भूमि तृण संकुलित, समुझि परे नहिं पंथ।
जिमि पाखंड बिबाद ते, गुप्त होहिं सद्ग्रंथ।
कलिमल ग्रासेउ धरम सब, लुप्त भए सद्ग्रंथ।
दंभिन निज मति कल्पि कर, प्रगट किये बहु पंथ॥
श्रुति सम्मत परि भगति पथ, संयुत विरति विवेक।
तेन चलहिं नर मोह बश, कलपहिं पंथ अनेक॥

अर्थ—महाजनोयेनगतः सपंथा तथा एषनिष्कण्टकः पन्था यत्र सम्पूज्यतेहरिः इत्यादि आर्ष वचनों के प्रमाणों से भगवत भक्ति के सच्चे पंथको छोड़कर पाखण्डी लोग नाना पन्थ और ग्रन्थोंका झूठा प्रचार करते हैं।

प्रश्न—हे स्वामी जी कितने पाखंडी लोग श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी की रामायण की भी निंदा करते हैं सो क्यों?

उत्तर—हे शिष्य श्री गोस्वामी जी की निंदा करने वाला संसार मे कोई नहीं है केवल दयनन्दीय ही लोग हैं उसमें भी पञ्जाब प्रान्त के सब दयानन्दीय लोग रामायण को मानते हैं बाकी और सब निंदा करते है हे शिष्य श्री गोस्वामी जी की निन्दा की जैसा मेरठ वाले तुलसीराम शर्मा है ऐसा कोई भी न हुआ न होगा जैसे सब दैत्यों के गुरू श्रीशुक्राचार्य्य जीं है तैसे ही सब दयानन्दियों का गुरू एकाक्ष तुलसीराम शर्मा था सो भी कुछ काल हुआ मर गयो इसलिये अब विशेष कहना वृथा है। जिन्दा होता तो कहते उन्होंने जो रामायण की निंदा की है इसका कारण यह था कि रामायण में श्रीगोस्वामी जो ने लिखा है कि—

कानें खोरे कूबरे, कुटिल कुचाली जानि।
तिय बिशेषि पुनि चेरि कहि, भरत मातु मुसकानि॥

यह बात देख के तुलसीराम शर्मा बहुत चिढ़ गया था इस से श्रीगोस्वामीजी की निन्दा की। दूसरे श्रीगोस्वामो जी के इस वचन को चरितार्थ करने के वास्ते जैसे ब्राह्मणों के अपमान करने से दयानन्द नास्तिक बनगया और ब्राह्मण वृत्तिको खंडन किया सोई हाल यहां एकाक्ष तुलसीराम शर्मा का जानना चाहिये तीसरा आशय यह है कि (काणः साधूः कचित् २) अर्थात् काना सज्जन कोई २ होता है दुष्ट विशेष होते है सोई तुलसीराम शर्मा दुष्ट था एक तो नास्तिक दूसरे काना फिर निन्दा क्यों नकरे। दुष्टों का काम निन्दा करना ही है। हे शिष्य

उत्तर—हे शिष्य श्री गोस्वामी जी की निंदा करने वाला संसार मे कोई नहीं है केवल दयनन्दीय ही लोग हैं उसमें भी पञ्जाब प्रान्त के सब दयानन्दीय लोग रामायण को मानते हैं बाकी और सब निंदा करते है हे शिष्य श्री गोस्वामी जी की निन्दा को जैसा मेरठ वाले तुलसीराम शर्मा है ऐसा कोई भी न हुआ न होगा जैसे सब दैत्यों के गुरु श्रीशुक्राचार्य्य जी है तैसे ही सब दयानन्दियों का गुरू एकाक्ष तुलसीराम शर्मा था सो भी कुछ काल हुआ मर गयो इसलिये अब विशेष कहना वृथा है। जिन्दा होता तो कहते उन्होंने जो रामायण की निंदा की है इसका कारण यह था कि रामायण में श्रीगोस्वामी जी ने लिखा है कि—

काने खोरे कूबरे, कुटिल कुचाली जानि।
तिय बिशेषि पुनि चेरि कहि, भरत मातु मुसकानि ॥

यह बात देख के तुलसीराम शर्मा बहुत चिढ़ गया था इस से श्रीगोस्बामीजी की निन्दा की। दूसरे श्रीगोस्वामी जी के इस वचन को चरितार्थ करने के वास्ते जैसे ब्राह्मणों के अप-मान करने से दयानन्द नास्तिक बनगया और ब्राह्मण वृत्तिको खंडन किया सोई हाल यहां एकाक्ष तुलसीराम शर्मा का जानना चाहिये तीसरा आशय यह है कि (काणः साधूः क्वचित् २) अर्थात् काना सज्जन कोई २ होता है दुष्ट विशेष होते है सोई तुलसीराम शर्मा दुष्ट था एक तो नास्तिक दूसरे काना फिर निन्दा क्यों नकरे। दुष्टों का काम निन्दा करना ही है। हे शिष्य

सज्जनों की कीर्ति देख कर दुर्जन लोग बहुत उपाय करते हैं कि मेरी भी ऐसी ही कीर्त्ति हो, जब उस पद को नहीं पहुँच सके जैसा कि नीतिशास्त्र में कहा है यथा—

दह्यमानाः सुतीक्ष्णेन नीचाः परयशोऽग्निना ।
अशक्तास्तत्पदं गन्तुं ततो निन्दां प्रकुर्वते ॥८४
न बिना परवादेन रमते दुर्जनो जनः ।
काकः सर्वरसान्भुङ्क्ते विनाऽमेध्यं न तृप्यति ८५
सन्त्यज्य शूर्पवद्दोषान्गुणान्गृह्णाति पण्डितः ।
दोषग्राही गुणत्यागी चालनीव हि दुर्जनः ८६
अन्तःसारविहीनस्य सहायः किं करिष्यति ।
मलयेऽपि स्थितो वेणुर्वेणुरेव न चन्दनः । ८७ ।

अर्थ—दूसरेके यश रूप तेज अग्निसे नीच लोग जरजाते हैं उस पदवी के लिये उपाय तो बहुत करते हैं, जब सब उपाय करके थक जाते हैं तब निन्दा करने लगते हैं, सो ये दुष्टों का स्वभाव ही है कि जब तक कि किसी की निन्दा न करें तब प्रसन्न नहीं होते, जैसे काक (कौवा) सब रस खाने पर भी बिना विष्ठा और मांस के खाये तृप्त नहीं होते हैं । सज्जन लोग शूर्प (सूप) की तरह अवगुण को त्याग कर गुण को ग्रहण करते हैं और दुष्ट लोग चलनी की तरह गुण को त्याग कर

अवगुण को ग्रहण कर लेते हैं । जैसे सूप कचरा को छोड़ कर सार अन्दर में रखलेता है और चलती चलनी सार को गिरा देती है, कचरा को अन्दर में रखलेती है, तैसेही पण्डित लोग हंस की तरह वेद पुराण से सार ले लेते हैं, असारवस्तु को त्याग देते हैं, और दुष्ट लोग श्रीरामायण से, भागवत से, अवगुण खोज २ कर निकालते हैं गुण को त्यागदेते हैं। काहे से कि दुष्टों का हृदय सार शून्य है, इस से सार हीन को शिक्षादि क्या करेगा मलयाचल पर सब काष्ठ चन्दन होजाता है परन्तु बांस बांस ही रह जाता है । हे शिष्य इसी प्रकार से बहुत कहा है इस से दुष्ट लोगों का स्वभाव ही विलक्षणहोता है ।श्री गोस्वामीजी ने रामायण के बालकाण्ड में ही दुष्टों के लक्षणयों कहे हैं—

मैं अपनी दिशि कीन्ह निहोरा । तिन्ह निज ओर न लाउब भोरा॥
बायस पालिय अति अनुरागा । होहिं निरामिष कबहुँकि कागा ॥

इत्यादि पाषण्डियों के बचन पर ध्यान नहीं देना चाहिये यथा—श्रीरामाश्वमेध अध्याय ५८ ॥

पापण्डैर्दूष्टचित्तैश्च सर्वधर्मबहिष्कृतैः ।
निन्दिता श्रुतिरग्राह्या भवत्वग्रजन्मनाम् । ८८ ।
सूर्योजगत्प्रकाशाय समुदेति जगत्यहो ।
उलूकानां रुचिकरो न भवेत्तत्र काक्षतिः । ८६ ।

१४७

अथ जो पाखण्डी कुप्रकृतिभाव वाले हैं और श्रौत स्मार्त धर्मों से बाहर कर दिये गये हैं वे निन्दित पुरुष ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को ग्रहण करने योग्य नहीं है अर्थात् उनके निन्दा आदि कर्मों को कभी भूल कर भी न सुनना चाहिये। सूर्य संसार के प्रकाशार्थ उदय होता है जिसके दर्शन करने से सब लोग आश्चर्य मानते हैं और प्रसन्न होजाते है परन्तु उलूक पक्षि को अच्छा नहीं लगता है उस से सूर्य की क्या हानि हुई कुछ भी नहीं है शिष्य इसी प्रकार से श्री गोस्वामीजी की अपूर्व कीर्ति संसार के कल्याणार्थ है जहाँ दुष्ट नास्तिकों को न अच्छी लगे तो श्री गोस्वामी जी की क्या हानि है कुछ भी नहीं और खल परिहास होइ हित मोरा। काक कहहिं कल कंठ कठोरा।' इत्यादि उपकार ही माने हैं फिरभी सुनो।

कहहिं सुनहिं अस अधम नर, ग्रसे जे मोह पिशाच।
पाखण्डी हरि पद विमुख, जानहिं झूंठ न साँच॥

अज्ञ अकोबिद अन्ध अभागी। काई विषय मुकुर मन लागी॥
लंपट कपटी कुटिल बिशेखी। सपनेहु संत सभा नहिं देखी॥
कहहिं ते वेद असंमत बानी। जिन्हहिं न सूझ लाभ नहिं हानी॥
मुकुर मलिन अरु नयन बिहीना। राम रूप देखहिं किमि दीना॥
जिनके अगुन न सगुन विवेका। जलपहिं कल्पित वचन अनेक॥
हरि मायाबस जगत भ्रमाहीं। तिनहिं कहतकछु अघटितनाहीं॥
बातुल भूत विबस मतवारे। ते नहिं बोलहिं वचन बिचारे॥
जिन कृत महा मोद मद पाना। तिनकर कहा करियनहिं काना॥

अर्थात्—जो राम कृष्णादि अवतारों को मनुष्य कहते हैं और मानते हैं, वे पापी हैं, उनको महामोहरूपी प्रेतने पकड़ लिया है, वे पाखंडी हैं और भगवत के चरण से विमुख हैं उन मूर्ख पशुओं को सत्यासत्य का ज्ञान कुछ भी नहीं है वे वेद से विरुद्ध बातें कहते हैं। जिनको हानि लाभ नहीं देख परता वे मूर्ख हैं, अज्ञानी हैं, अभागी हैं, उनका विषय रूपी काई से मन दर्पण मलीन हो रहा है वे लंपट याने लुब्ध हैं कपटी हैं, कुटिल हैं स्वप्न में भी साधुओं के दर्शन नहीं किये हैं, उनका मन रूपी दर्पण विषय काई से मलीन हो रहा है और ज्ञान वैराग्य रूप नेत्र चोपट हो रहा है वे दीन सब प्रकार से हीन श्रीराम-कृष्णादि के स्वरूप को कैसे देखें। जिन मूर्खों को निर्गुण सगुण का बिचार नहीं है वे दुष्ट वृथा ही कपोल कल्पित बातें किया करते हैं वे भगवत माया से मोहित हो रहे है उनके कहने से कुछ कमती नहीं होती है जो बात व्याधि (सन्निपात) के विवश में पागल हो रहे है वे संभार कर नहीं बोलते हैं जो मूर्ख पशु की तरह रात्रि दिन विषय को चाहता रहता है वह क्या जाने वह महा मोह रूपी मद्यपान किया है उस मूर्ख के बचन कभी भूल कर न सुने। वे नर कूकर शूकर से शठ वृथाही जगमें जीते है इत्यादि कहा है।

प्रश्न—हे स्वामी जी मूर्ख नास्तिक लोग कहा भी तो नहीं मानते है क्या कारण है।

उत्तर—हे शिष्य ईश्वर की माया बड़ी बड़ी प्रबल है

अर्थात्—जो राम कृष्णादि अवतारों को मनुष्य कहते हैं और मानते हैं, वे पापी हैं, उनको महामोहरूपी प्रेतने पकड़ लिया है, वे पाखंडी हैं और भगवत के चरण से बिमुख हैं उन मूर्ख पशुओं को सत्यासत्य का ज्ञान कुछ भी नहीं है वे वेद से विरुद्ध बातें कहते हैं। जिनको हानि लाभ नहीं देख परता वे मूर्ख हैं, अज्ञानी हैं, अभागी हैं, उनका विषय रूपी काई से मन दर्पण मलीन हो रहा है वे लंपट याने लुब्ध हैं कपटी हैं, कुटिल हैं स्वप्न में भी साधुओं के दर्शन नहीं किये है, उनका मन रूपी दर्पण विषय काई से मलीन हो रहा है और ज्ञान वैराग्य रूप नेत्र चौपट हो रहा है वे दीन सब प्रकार से हीन श्रीराम-कृष्णादि के स्वरूप को कैसे देखें। जिन मूर्खों को निर्गुण सगुण का बिचार नहीं है वे दुष्ट वृथा ही कपोल कल्पित बातें किया करते हैं वे भगवत माया से मोहित हो रहे है उनके कहने से कुछ कमती नहीं होती है जो बात व्याधि (सन्निपात) के विवश में पागल हो रहे है वे संभार कर नहीं बोलते हैं जो मूर्ख पशु की तरह रात्रि दिन विषय को चाहता रहता है वह क्या जाने वह महा मोह रूपी मद्यपान किया है उस मूर्ख के बचन कभी भूल कर न सुने। वे नर कूकर शूकर से शठ वृथाही जगमें जीते है इत्यादि कहा है।

प्रश्न—हे स्वामी जी मूर्ख नास्तिक लोग कहा भी तो नहीं मानते है क्या कारण है।

उत्तर—हे शिष्य ईश्वर की माया बड़ी बड़ी प्रबल है

वह मानने नहीं देती है। मगर वे मान ही जाँय तो दुष्ट क्यों ? तब तो सब विद्वान पण्डित दुष्टों को मना लिया करें। फेर दुष्टों की सृष्टि ही बन्द हो जाय सो कभी हो नहीं सक्ता है। इसीसे तो श्री गोस्वामी जी ने रामायण में कहा है कि—

फूले फरे न बेत, जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहिं बिरंचि सम॥

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि तं नरं न रंजयति॥

अर्थ—मूर्ख तो सुख पूर्वक समझने योग्य है और ज्ञानी तो अत्यन्त सुखसे समझाने योग्य है। परन्तु जो बीचवाला है उस ज्ञान हीन मूर्ख लालबुझक्कड़ को ब्रह्मा भी नहीं समझा सक्ते है। अर्थात् जब ब्रह्मा ही नहीं समझा सक्ते तो मनुष्यों की बात ही क्या है इससे हे शिष्य पाखंडी को समझाना कठिन है यथा—

खलउ करहि भल पाइ सुसंगू। मिटइ न मलिन सभाउ अभंगू॥

इत्यादि। इस से दुष्टों के लिये कोई उपाय नहीं है यथा—नीति शास्त्रे—

पोतो दुस्तरवारिराशितरणे दीपोन्धकारागमे।
निर्वाते व्यजनं महान्धकरिणां दर्पोपशान्त्यै सृणिः॥ इत्थं तद्भुवि नास्ति यस्य विधिना

नापायचिन्ता कृता । किं वा दुर्जनचित्तवृत्तिहरणो धातापि भग्नोद्यमः ॥ ६० ॥

अर्थ—अपार समुद्रके पार होनेके वास्ते नौका बनाई जाती है मन्दिरके अन्धकार दूरकरनेके वास्ते दीपक जलाया जाता है निर्वात स्थानकेवास्ते व्यजन(पङ्खा)बनायाहै और उन्मत्त हाथियोंकेवास्ते अङ्कुश बनाया है इस प्रकार से ऐसा कोई भी कार्य नहीं है कि जिसका ब्रह्माजी ने उपाय न किया हो । परन्तु दुष्टके स्वभाव दूर करने के लिये ब्रह्माजी के भी सब उपाय नष्ट होगये उपाय तो बहुत किया परन्तु दुष्टों के वास्ते उपयोगी एक भी न हुआ ॥ हे शिष्य ऐसे दुष्टों की दशा शास्त्रकारों ने वर्णन किया है फिर वे क्यों मान सकते हैं । देखो रावणको भक्त शिरोमणि श्री बिभीषणजी ने और मन्दोदरी ने तथा प्रहस्तादिक मन्त्रियों ने कितना समझाया परन्तु रावण दुष्ट ने एक भी न मानी और श्री रामजी को मनुष्य ही कहता कहता २ मर भी गया इसी । प्रकार से आज कल के जितने राक्षसों के अवतार नास्तिक लोग हैं उनको कुछ भी कहो गे एक भी नहीं मानते हैं, और न मानेगें, देखो नास्तिक दयानन्दीय लोग सैकड़ों जगह शास्त्रार्थ में पराजय होजाते हैं । बड़ी २ दुर्दशा भी होती है उस पर भी नहीं मानते हैं । अपना राँडों का रोना रोते ही रह जाते हैं । जैसा कि मशल है कि (काजी जी मुझे हराते थे मैं हार न मानी) सोई हाल दयानन्द का था सोई हाल उसके चेलों का है ।

नापायचिन्ता कृता । किं वा दुर्जनचित्तवृत्तिहरणे धातापि भग्नोद्यमः ॥ ६० ॥

अर्थ—अपार समुद्रके पार होनेके वास्ते नौका बनाई जाती है मन्दिरके अन्धकार दूरकरनेके वास्ते दीपक जलाया जाता है निर्वात स्थानकेवास्ते व्यजन(पङ्खा)बनायाहै और उन्मत्त हाथियोंकेवास्ते अङ्कुश बनाया है इस प्रकार से ऐसा कोई भी कार्य नहीं है कि जिसका ब्रह्माजी ने उपाय न किया हो। परन्तु दुष्टके स्वभाव दूर करने के लिये ब्रह्माजी के भी सब उपाय नष्ट होगये उपाय तो बहुत किया परन्तु दुष्टों के वास्ते उपयोगी एक भी न हुआ ॥ हे शिष्य ऐसे दुष्टों की दशा शास्त्रकारों ने वर्णन किया है फिर वे क्यों मान सकते हैं। देखो रावणको भक्त शिरोमणि श्री बिभीषणजी ने और मन्दोदरी ने तथा प्रहस्तादिक मन्त्रियों ने कितना समझाया परन्तु रावण दुष्ट ने एक भी न मानी और श्री रामजी को मनुष्य ही कहता कहता २ मर भी गया इसी। प्रकार से आज कल के जितने राक्षसों के अवतार नास्तिक लोग है उनको कुछ भी कहो तो एक भी नहीं मानते हैं, और न मानेगें, देखो नास्तिक दयानन्दीय लोग सैकड़ों जगह शास्त्रार्थ में पराजय होजाते है। बड़ी २ दुर्दशा भी होती है उस पर भी नहीं मानतें हैं। अपना राँडों का रोना रोतें ही रह जाते हैं। जैसा कि मशल है कि (काजी जो मुझे हराते थे मैं हार न मानी) सोई हाल दयानन्द का था सोई हाल उसके चेलों का है।

प्रश्न—हे स्वामीजी नास्तिकों का चेहरा क्यों भयङ्कर और मलीन हो जाता है ।

उत्तर—हे शिष्य नास्तिकों की प्रकृति राक्षसी हो जाती है इससे भयङ्कर और मलीन हो जाता है । इसका कारण यह है कि नास्तिकों को शास्त्रकारों ने चाण्डाल कहा है इस में मलीन भयङ्कर जान पड़ते हैं यथा—

नास्तिकः पिशुनश्चैव कृतघ्नो दीर्घरोषकः ।
चत्वारः कर्मचाण्डाला जन्मतश्चापि पञ्चमः ६१

अर्थ—नास्तिक १ चुगलखोर २ कृतघ्न याने किया हुआ उपकार को न मानने वाला ३ दीर्घ नाम बहुत काल पर्यन्त क्रोध रखने वाला । भाव क्रोध तीन प्रकार के हैं क्षण मात्र का क्रोध सात्विक है, दो चार दिन क्रोध रखना राजसी है, बहुत काल पर्यन्त क्रोध रखना अर्थात् जन्म भरके लिये गांठ बांध लेना तामसी है ये चार तो कर्म चाण्डाल के हैं और जन्म से ही पंचम चांडाल कहा है इससे नास्तिकों के चेहरे भयानक हो जाते हैं ।

प्रश्न—हे स्वामी जी नास्तिकों की सभा में सनातनी को जाना चाहिये कि नहीं सो कहिये ।

उत्तर—हे शिष्य हमारे शास्त्रकारों ने जो लिखा है कि-

न वदेद्यावनीं भाषां प्राणैः कण्ठगतैरपि ।
हस्तिना पीड्यमानोपि न गच्छेज्जैनमंदिरे ६२

अर्थ--प्राण कण्ठ गत होने परभी मुसल्मानी भाषा (उर्दू पारसी) न बोले एवं हाथी के मारने पर भी जैन मन्दिर में न जावे, भाव हाथीं मारने को दौड़े और जैन मन्दिर में भागने का मार्ग हो तो न भागना, वहीं मरजाना चाहिये इससे यह दिखाया कि मर जाना उचित है परन्तु नास्तिकों के मन्दिर व सभा में भूल कर न जाय ।

प्रश्न--हे स्वामीजी बहुत से सनातनी लोग दयानन्दी की सभा में जाकर नास्तिकों के व्याख्यान सुनते है सो क्यों सुनते है? उनको क्या दोष होता होगा ?

उत्तर—हे शिष्य जो पूरा सनातनी होगा श्रीरामकृष्ण का भक्त तो कभी भूलकर दयानन्द का व्याख्यान न सुनेगा और जो मूर्ख हैं जिनको अपने धर्म का विचार कुछ भी नहीं है केवल कहने ही मात्र सनातनी है उन मूर्खों की तो बातही क्या है वे जो करें सभी थोरा है । हे शिष्य दयानन्दी नास्तिक है वे रामकृष्णादि को मनुष्य मानते है और तीर्थ, व्रत, श्राद्ध, मूर्ति पूजाकी निन्दा करते है फिर सनातनी को बार २ धिक्कार है जो अपने इष्ट की निन्दा सुनने के लिये उनकी सभा में जाते हैं और मुख फाड़कर निन्दा सुनते हैं ऐसे। अधर्मी का मुख देखना धर्म नहीं है । हाय २ बड़े धिक्कार की बात है । हे शिष्य

जो श्री रामकृष्णादि की निन्दा सुनते हैं, उन्हें गौहत्या का पाप लगता है । देखो जिस समय में अङ्गदजी रावण के दरबार में गये उस समय में रावण ने श्री रामचन्द्रजी की निन्दा की तब अङ्गद जी को क्रोध उत्पन्न हुआ यथा—

जब तेहि कीन रामकर निन्दा । क्रोधवन्त तब भयेउ कपिन्दा ॥
हरिहर निन्दा सुने जो काना । होइ पाप गो घात समाना ॥

ऐसा लिखा है इससे भगवत निन्दा कभी भूलकर न सुननी चाहिये और न नास्तिकों के व्याख्यान ही सुनना उचित है— कदापि कोई निन्दा करता हो तहाँ, ऐसी मर्याद है यथा—

संत शंभु श्रीपति अपबादा । सुनिय जहाँ तहाँ असि मरजादा ॥
काढ़िय जीभ जासु जो बसाई । श्रवन मूंदि नतु चलिय पराई ॥

इससे निन्दा करने वाले की जीभ खींच लेनी चाहिये नहीं तो कान बन्द कर भग-जाना चाहिये । दो में एक भी न करे तो गौ हत्या का भागी होना परता है । इससे राम-कृष्ण के द्रोही को त्याग देना चाहिये यथा—

जाके प्रिय न राम बैदेही । तजिये तासु कोटि वैरी सम जद्यपि परम सनेही । तज्यो पिता प्रह्लाद विभीषण बन्धु भरत महतारी । बलि गुरु तज्यो कन्त ब्रज वनितन भये जग मङ्गल कारी । इत्यादि

बिनय में श्री गोस्वामी जी ने कहा है । इससे नास्तिक का सङ्ग त्याग देना ही उत्तम धर्म है ।

प्रश्न—हे स्वामीजी ! आपकी कृपामयी वाणी सुनकर मेरे सब सन्देह दूर होगये और यह पूरा निश्चय होगया कि जितने नास्तिक श्रीराम कृष्णादि के न मानने वाले हैं ; वे सब राक्षस और यमदूतों के अवतार हैं ; इसमें कोई भी सन्देह नहीं है ; अब आप कृपा करके यह बात बताइये कि इस घोर कलिकाल में मुख्य साधन क्या है जिससे कि जीव का उद्धार हो

उत्तर—हे शिष्य इस घोर कलिकाल में केवल एक श्रीराम नाम ही आधार है और दूसरा साधन कुछभी नहीं यथा—

नहिं कलि कर्म न भगति बिबेकू । राम नाम अवलंबन एकू ॥

यह कलिकाल मलायतन, मन करि देखु बिचार ।
श्रीरघुनाथ नाम तजि, नाहिन आन अधार ॥

काल नेमि कलि कपट निधानू । नाम सुमति समरथ हनुमानू ॥
इत्यादि

श्री गोस्वामी जी के सिद्धान्त हैं, सोई श्रुति स्मृति पुराणों का सिद्धान्त है यथा यजुर्वेदे ॥

जपात्तेनैव देवतादर्शनं करोति कलौ नान्येषां भवति ॥ ६३ ॥

अर्थ— कलियुग में नामही जपने से ईश्वर का दर्शन होता है और साधन वाले को दर्शन नहीं होता अब पुराणों के बचन सुनो बृहन्नारदीय पुराणे—

तस्मात्समस्तलोकानां हितमेव मयोच्यते ।
रामनामपरान्मर्त्यान्न कलिर्बाधते क्वचित् ॥६४॥
सकृदुधारयेद्भक्त्या रामनाम कलौ युगे ।
ते कृतार्थाः महात्मनस्तेभ्यो नित्यं नमो नमः॥६५
न्यूनातिरिक्तताासिद्धौ कलौ वेदोक्तकर्मणाम् ।
नामसंकीर्तनादेव सम्पूर्णं फलदायकम् ॥६६॥
अहो चित्रमहो चित्रमहोचित्रमिदं परम् ।
रामनाम्नि स्थिते लोके संसारं वर्तते पुनः ॥६७॥

अर्थ—सर्व लोकों के वास्ते हितकारी बात हम कहते हैं, जो मनुष्य श्रीरामनाम में प्रीति करेगा उसको कलियुग कभी न बाधा करेगा। जो एक बार भी कलियुग में श्रीराम कहते हैं वे महात्मा कृतार्थ हो जाते हैं। उनको बार २ नमस्कार है। कलियुग में वेदोक्त कर्म कठिन साधन से भी संपूर्ण फलदायक नहीं होते हैं, वेही कर्म श्रीरामनाम के स्मरण करने ही मात्र से संपूर्ण फलदायक होजाते हैं, यह बड़ा आश्चर्य है कि जो श्रीराम नामके संसारमें वर्तमान रहते मनुष्य बार बार जन्मते रहते भी हैं। जगत कर आवा गमन से रहित नहीं होते हैं पुनः विश्वामित्र संहितायां:—

धन्याः पुण्याः प्रपन्नास्ते भाग्ययुक्ताः कलौयुगे।

सर्व्विहायाथ योगादीन् रामनामैकनैष्ठिकाः ।६८
वृथा नानाप्रयोगेषु मन्त्रतन्त्रेषु मानवाः ।
यत्नंकुर्वंत्यहोमूढास्त्यक्त्वाश्रीरामनामसुंदरम् ॥ ६६

अर्थ—कलियुग में उन भाग्यशाली भक्तों के भाग्य और पुण्य धन्य हैं कि सम्पूर्ण योगादि साधनों को छोड़ कर केवल श्रीरामनाम ही में प्रीति किये हैं। बड़ा आश्चर्य है जो सुन्दर श्री राम नाम को छोड़ कर मूर्ख लोग नाना प्रकार के मन्त्र यन्त्र तन्त्रादि के प्रयोग में यत्न करते हैं॥ हे शिष्य इसी प्रकार से बहुत कहा है। विशेष देखना हो तो वेदार्थप्रकाश रामायण देखो जिस में श्री राम नाम का माहात्म्य विस्तार से वर्णन किया है।

प्रश्न—हे स्वामी जी दयानन्दने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है कि नाम स्मरण मात्र से कुछ भी फल नहीं होता जैसे मिश्री कहने से मुंह मीठा और नीम कहने से कडुआ नहीं होता। ऐसा लिखा है इससे तो जान परता है कि नाम लेने से कुछ भी नहीं होता है।

उत्तर—हे शिष्य बार २ तो कहाहै कि दयानन्द नास्तिक और पाषण्डी था उस के वचन पर ध्यान नहीं देना चाहिये देखो दयानन्द ने यजुर्वेद के २५ अध्या मं० का ७ भावार्थ लिखा है कि गुरु शिष्य को गुदा से अन्धा साँप पकड़ लेने की शिक्षा

देवे। ऐसी २ बातें बहुत लिखी हैं, कहां तक कहैं और नाम के माहात्म्य तो स्वयं वेद में स्पष्ट लिखा है यथा यजुर्वेद म० ३८ मं० ३।

यस्य नाम महद्यशः ॥ १०० ॥

अर्थ—जिस के नाम का बहुत बड़ा यश है । हे शिष्य भगवत नाम का माहात्म्य जैसा इस मन्त्र में खुलासा है वैसा और किसी मन्त्र में नहीं इस से जान पड़ता है भगवन्नाम का माहात्म्य भारी है इस में सन्देह करना मूर्खों का काम है यहां दो श्रुति और भी हैं यजुर्वेदे यथा-

ॐ परब्रह्मज्योतिमयं नाम उपास्यं मुमुक्षुभिः।१०१
ओमित्येकाक्षरं यस्मिन्प्रतिष्ठितं तन्नाम ध्येयं।
संसृतिपारमिच्छो ॥१०२॥

अर्थात्—ॐकार एकाक्षर परब्रह्म ज्योतिमय नाम मुमुक्षुओं को उपास्य है। भाव बिना नाम जपे मोक्ष होना दुर्ल्लभ है। ॐकार ऐसा एकाक्षर ब्रह्म जिस में प्रतिष्ठित है उस के नाम को संसार पार जाने की इच्छा वाले जपें इस तरह से गीता में भी कहा है यथा-अध्याय ८ श्लोक १३॥

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।

यः प्रयाति त्यजन् देहं स याति परमां गतिम्॥१०३

ॐ इस एकाक्षर ब्रह्म का उच्चारण करता २ मेरे को सुमिरता २ जो देह त्यागता है सो अति उत्तम गति को प्राप्त होता है। जैसा श्रुति में कहा है तैसे ही श्री गीता जी में भी कहा है दोनों का एक सिद्धान्त है इससे नामका यश भारी है।

प्रश्न—हे स्वामी जी ॐकार ब्रह्म किस में प्रतिष्ठित है?

उत्तर—हे शिष्य रामतापनीयोपनिषद् के देखने से तो जान पड़ता है कि रामनाम से और प्रणव से अभेद है सोई बात राम रहस्य वेदसारोपनिषत् में कहा है और ॐकार कार्य है यथा—

कारणं प्रणवस्यापि रामनाम जगद्गुरु।
तस्माद्ध्येयं सदा चित्ते यतिभिः शुद्धचेतनैः॥
रामनाम्नःसमुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः॥१०४

अर्थ—ॐकार का भी कारण जगद्गुरु श्रीरामनाम ही है उससे संन्यासी को भी चाहिये कि शुद्ध मनसे श्री रामनाम का सर्वदा ध्यान कर स्मरण करे॥ रामनाम ही मोक्ष का देने वाला इससे ॐकार उत्पन्न हुआ है इस प्रकार से बहुत कहा है

अतः श्री राम नाम में जो कुतर्क करते हैं सो भी राक्षस ही हैं यथा-इतिहासोत्तमे ॥

रामनाम्नि सुधाधाम्नि कुतर्कनिरयावहम् ।
समाश्रयन्ति ये पापास्ते महाराक्षसाऽधमाः १०५
प्रभाकरस्य संकाशं सर्वलोकैकगोचरम् ।
उलूका नेत्रहीनाश्च नैव पश्यन्ति दुर्भगाः ।१०६
पुरा महर्षयः सर्वे रामनामानुकीर्तनात् ।
सिद्धा ब्रह्मसुखे मग्ना याताः श्रीरामसद्मनि १०७

अर्थ--अमृत के स्थान श्री रामनाम में जो कोई कुतर्कारोपण करते हैं वे महा पापी राक्षसों में भी अधम हैं। सूर्यका प्रकाश सब को देख परता है परन्तु नेत्र हीन उलूक पक्षी नहीं देखता है ऐसा भाग्य हीन है। भाव जिसको ज्ञान वैराग्य रूप नेत्र नहीं है वे मूर्ख श्री रामनाम को क्या जाने । पूर्वकाल में सब ऋषियों ने श्री राम नाम का कीर्तन किया और ब्रह्मानन्द में मग्न होकर राम धाम श्रीसाकेत को गये। श्री रामनाम में जिस की प्रीति नहीं है वह चाण्डाल ही है यथा-पत्वालीसंहितायाः—

नाम्नियस्यरतिर्नास्ति सर्वेचाण्डालतोऽधिकः।
सम्भाषणं न कर्त्तव्यं तत्समं नामतत्परैः ॥१०८

अहो धैर्य्यमहोधैर्य्यमहोधैर्य्यमिदं नृणाम् ।
रामनाम्निस्थितेलोके न भजन्तिबहिर्मुखाः ॥१०६

रामानामामृतं पीत्वा भवेन्नित्यंनिरामयम् ।
सिद्धांतसारमित्येकं साधूनां भावितात्मनाम् ११०

अर्थ--श्रीरामनाम में जिसकी प्रीति नहीं है, वह निश्चयही चाण्डालसेभी विशेष नीच है । अर्थात् महा चाण्डाल है ।उससे श्री रामनामानुरागी को भाषण नहीं करना चाहिये । मनुष्यों को कैसे धीरज होता है बड़ा आश्चर्य्य है जो सर्वोपरि श्रीरामनाम संसार में वर्तमान है फिर भी नहीं भजते हैं और ऐसे रामनाम से विमुख हो रहे हैं ॥ श्रीराम नाम रूप अमृत को पी करके नित्य रोग से रहित हो जाँय यह एक ही अचल सिद्धान्त साधुभाविकों का है । इसीसे महाजनो येनगतः सपन्था लिखा है । ऐसे ही केदारखण्ड में श्रीशिवजी के वचन पार्वतीजी से हैं—

एवं नामप्रसादेन ऋषयो देवतास्तथा ।
मनुष्याः किन्नरा नागा यक्षा विद्याधरास्तथा १११

सर्वे कृतार्था अभवन् तस्मिन् तस्मिन्युगे युगे ।
नातः परतरोपायो दृश्यते श्रूयतेऽपि वा ॥११२

अर्थ--इस प्रकार से श्रीरामनाम के प्रभावसे और कृपानुग्रह से ऋषि, देवता, मनुष्य, किन्नर, नाग, यक्ष, विद्याधर सभी युगों में कृतार्थ हो गये हैं यथा-

चहुँ, जुग तिनि काल तिहुँ लोका। भये नामजपि जीव बिशोका
चहुँ युग चहुँ श्रुति नाम प्रभाऊ। कलिविशेषि नहिं आन उपाऊ

इत्यादि इससे उत्तम उपाय दूसरा नहीं तो पाया है और नहीं किसी शास्त्र में सुनाही ऐसे ही नारदीयपुराण में भी कहा है यथा—

किं तीर्थैः किं व्रतैर्होमैः किं तपोभिः किमध्वरैः।
दानैर्ध्यानैश्च किं ज्ञानैर्विज्ञानैः किं समाधिभिः॥
किं योगैः किं विरागैश्च जपैरन्यैः किमर्च्चनैः।
यन्त्रमन्त्रैस्तथा तन्त्रैः किमन्यैरुग्रकर्मभिः॥११४
स्मरणात्कीर्त्तनाच्चैव श्रवणाल्लेखनादपि।
दर्शनाद्धारणादेव रामनामाखिलेष्टदम्॥११५॥

अर्थ—तीर्थ से, व्रत से, योग से, बिराग से, जप से, पूजा से, यन्त्र से, मन्त्र से, तन्त्र से, तथा और भी अनेकों प्रकारके श्रेष्ठ कर्मोंसे क्या प्रयोजन है कुछभी नहीं, स्मरण करने से कीतन करने से और श्रवण करने से तथा लिखने से दर्शन से और यन्त्रादि बना कर धारण करने से श्रीराम नाम सम्पूर्ण

मन वांछित फलों के देने वाले हैं भाव, रामनाम से बढ़कर कुछ भी नही है जो है सो नाम ही है। ऐसे ही आदिपुराण में श्रीकृष्णजी ने अर्जुन से कहा है—

नामैव परमा मुक्तिर्नामैव परमागतिः।
नामैव परमा शांतिर्न्नामैव परमागतिः ॥११६॥
नामैव परमा भक्तिर्नामैव परमा धृतिः।
नामैव परमा प्रीतिर्नामैव परमा स्मृतिः ॥११७॥
नामैव परमं पुण्यं नामैव परमं तपः।
नामैव परमो धर्मो नामैव परमो गुरुः ॥ ११८ ॥
नामैव परमं ज्ञानं नामैव चाखिलं जगत्।
नामैव जीवनं जन्तोर्नामैव विपुलं धनम् ॥११९
नामैव जगतां सत्यं नामैव जगतां प्रियम् ॥
नामैव जगतां ध्यानं नामैव जगतां परम् ॥१२०
न नामसदृशं ध्यानं न नामसदृशो जपः।
न नामसदृशस्त्यागो न नामसदृशी गतिः॥१२१
न नामसदृशं तीर्थं न नामसदृशं तपः।
न नामसदृशं कर्म न नामसदृशः शमः ॥१२२॥

न नामसदृशी मुक्तिर्न नामसदृशः प्रभुः।

हे शिष्य इस प्रकार से ७१ श्लोक पर्यन्त श्रीराम नाम का माहात्म्य वर्णन है सो सब वेदार्थप्रकाश रामायण में लिख दिया है उसमें देख लेना और इन उपरोक्त श्लोकोंका अर्थ सुगम है इससे अर्थ नहीं लिखा है अक्षरार्थ ही जान लेना। हे शिष्य श्रीराम नाम के बराबर दूसरा कुछ भी नहीं है। जो कोई राम नाम के बराबर अथवा विशेष अन्य तत्त्व वा साधन कहते हैं सो भी राक्षस ही हैं ऐसा जानना चाहिये यथा—वृहद्विष्णु पुराणे।

रामनाम्नः परं किंचित्तत्वं वेदे स्मृतिष्वपि।
संहितासु पुराणेषु नैव तन्त्रेषु विद्यते ॥१२३॥
नाम्नो रामस्य ये तत्वं परं प्राहुः कुबुद्धयः॥
राक्षसांस्तान् विजानीयाद्व्रजेयुर्नरकं ध्रुवम् ॥१२४

अर्थ—श्रीराम नामसे परे तत्व वेद शास्त्र संहिता पुराण तंत्र रहस्यादिक में कुछ भी नहीं है जो मूर्ख श्रीराम नाम से विशेष कोई और तत्व कहते हैं उनको राक्षस जानना वे मरकर निश्चय नरक में जाँयगे। इससे श्रीराम नाम सर्वोपरि है पुनः महापुराणे ब्रह्मोवाचः—

श्रुत्वा श्रीरामनाम्नस्तु प्रभावं वै परात्परम्।

सत्यं यो नाभिजानाति द्रष्टव्यं तन्मुखं नहि १२५

अर्थ—श्रीराम नाम के परम प्रभाव को जो सुन करके सत्य नहीं जानते हैं उनका मुख नहीं देखना चाहिये। हे शिष्य यह कलिकाल है इसमें श्रीराम नाम की निंदा करने वाले बहुत हो होंगे यह भविष्य पुराण में स्पष्ट लिखा है:—

जीवाः कलियुगे घोरा रामपादपरांमुखाः।
भविष्यंति प्रिये सत्यं रामनामविनिन्दिकाः।१२६
गमिष्यन्ति दुराचारा निरये नात्र संशयः।
कथं सुखं भवेद्देवि रामनामबहिर्मुखाः॥१२७॥

अर्थ—श्रीनारायण का वचन है श्रीलक्ष्मीजी से कि हे देवी घोर कलियुग में सब जीव मेरे चरण कमल के विमुख हो जाँयगे और सब श्रीराम नाम की निन्दा करने वाले होंगे। सब दुराचारी राम नाम की निन्दा करने से नरक में जाँयगे। इसमें कोई भी संदेह नहीं है। हे देवि श्रीरामनाम से विमुख जीव को कैसे सुख होगा? अर्थात् नहीं होगा पुनः वाराहपुराणे श्रीशिवउवाच

करुणावारिधिं नाम ह्यपराधनिवारकम्।
तस्मिन् प्रीतिर्न येषां वै ते महापापिनो नराः १२८

पुनः मात्स्ये—

नामैव परमं ज्ञानं योगं ध्यानं तथा रतिः ।
विज्ञानं परमं गुह्यं रामनामैव केवलम् ॥१२९

नृसिंह पुराणे--

सर्वाभीष्टप्रदे नाम्नि प्रीतिर्नैवाभिजायते ।
मुने तस्यापराधानां नियमो नैव विद्यते ॥१३०
रामनाम्नि रतिर्नास्ति कुरुते धर्मसञ्चयम् ।
तत्सर्वं निष्फलं प्रोक्तं पथ वीजांकुरा इव ॥१३१

अर्थ-करुणा के स्थान और सब अपराधों के नाश करने वाले श्रीराम नाम में जिसकी प्रीति नहीं है वह मनुष्यों में पापी है श्री राम नाम ही परम ज्ञान है। परम ध्यान है परम योग पराप्रीति है नाम ही परम गुप्त से गुप्त तत्व है नृसिंह-पुराण में नारदजी के वचन याज्ञवल्क्यजी से हैं कि हेमुने संपूर्ण अभीष्ट फल के देने वाले श्रीराम नाम में जिसकी प्रीति नहीं है उसके अपराधोंका नेम नहीं है. भाव-नाममें जिसकी प्रीति नहीं है उसको जान लेनाकि यह सब अपराधोंका स्थान है। श्रीराम नामसे प्रीति छोड़कर जोधर्म संचय करता है वह सभी निष्फल होता है जैसे मार्गमें बीज बोया जाय तो बीजांकुर निष्फल हो जाता है ऐसेही जानो। पुनः वायुपुराणे शिवउवाच शिवांप्रति—

यत्र २ समुद्धारो दृश्यते श्रूयतेऽथवा ।

तत्सर्वं रामनाम्नैव सत्यं सत्यं वचो मम ॥१३२
रामामात्मिका बाणी श्रोतव्या सर्वदा बुधैः।
त्यक्त्वा नानार्थवच्छब्दान्वादविभ्रांति मरिड-
तान् ॥१३३॥

अर्थ--जहां २ उद्धार किसी का देख परता है अथवा सुन परता है वह सब श्रीराम नाम ही से हुआ है यह मेरा वचन सत्य सत्य कर जानना श्रीरामनाम वाली वाणी अर्थात् जिस काव्य में श्रीराम नाम का माहात्म्य वर्णन हो उस काव्य को परिडत जन सर्वदा सुनते हैं और वही सुनने योग्य है यथा-

सब गुण रहित कुकबि कृत बानी। रामनाम यश अङ्कित जानी॥
सादर कहहिं सुनहिं बुधताही। मधुकर सरिस संत गुनग्राही॥

इत्यादि और नाना अर्थ से भरी भ्रांति दायक वाद विवाद से भूषित वाणी त्याग देना चाहिये। भाव जिस काव्य में श्रीराम नाम नहीं है वह केवल भ्रम दायक है उसको परिडत लोग त्याग देते हैं यथा--

भनिति विचित्र सुकवि कृत जोऊ। राम नाम बिनु सोह न सोऊ॥
बिधुबदनी सब भांति संवारी। सोहन बसन बिना वरनारी॥

इत्यादि इस से श्रीराम नाम बिना काव्य वृथा है। हे शिष्य जिस काव्य में श्रीरामनाम नहीं है वह पाखंडी का बनाया ग्रन्थ जानना यथा ब्रह्मसंहितायां शिव उवाच---

कलिप्रभावतो नष्टा सद्ग्रन्थानां कथाशुभाः।
पाखण्डैर्निर्मितं नानामतं श्रीनामवर्जितम् ॥३४१

अर्थ—कलियुग के प्रकरण में ब्रह्माजी ने श्रीशङ्कर जी से पूछा कि कलियुग में बहुत नस्तिक हो जायगे, वेद से विरुद्ध धर्म चलावेंगे ; ऋषि प्रणीत ग्रन्थों को नष्ट करके अपने कपोल कल्पित ग्रन्थोंको बनाकर चलावेंगे; सो वेद विरुद्ध कल्पित ग्रन्थों का पहिचान कैसे होगा ? कृपा कर कहिये ? उसे सुन श्री शिवजी बोले कि कलियुग के प्रभाव से सद्ग्रन्थों के अर्थात् श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, श्रीमहाभारत, श्रीगीता जी श्रीमद्भागवतादि ग्रन्थोंकी शुभ कथा याने अवतार प्रकरण नाम माहात्म्य प्रकरण मूर्ति पूजन प्रकरण श्रीराम कृष्णादि की भक्ति प्रकरण श्राद्ध प्रकरण तीर्थ प्रकरण व्रत प्रकरणादि कथाओं को कल्पित कह कर निकाल देंगे जैसा कि आज कल नास्तिक दयानन्दीय लोग कर रहे हैं और पाखंडियों के बनाये ग्रन्थ नाना मतवाले प्रचार होंगे। उस में श्रीराम नाम नहीं होगा यही पहिचान है। भाव जिस ग्रन्थ में भगवत नाम का दो चार भी श्लोक न हो उसे जान लेना कि पाखंडियों का बनाया है।

प्रश्न—हे स्वामी जी आज कल के दयानन्दी लोग क्या करते हैं सो भी कहिये।

उत्तर—हे शिष्य आज कलके दयानन्दीय लोग जो गुरु कुल से कुछ थोरा बहुत पढ़कर निकलते हैं वे लोग रामायणसे

महाभारत से भक्तागादि प्रकरण के श्लोक निकाल कर पुस्तक छपाते हैं। उसको शुद्ध रामायण शुद्ध महाभारत शुद्ध गीता शुद्ध मनुस्मृति आदिक नाम धरते हैं। ऐसे पाखंडी नास्तिक लोग प्रगट हुए हैं यह सब कलियुग की कृपा है। हे शिष्य दयानन्द नास्तिक का और वर्णसङ्कर का बीज बो गया है। यह अब निर्बीज होना कठिन है अब तो भगवत भजन करनाही कल्याण है। यह सब भगवत की माया है। इसको नहीं देखना चाहिये वे परमात्मा अपनी योग माया में छिप कर नाना प्रकार की लीला करते हैं उसको जानना सब का काम नहीं है जिसके ऊपर उनकी कृपा होती है वेही उनको जानते हैं यथा—

जग पेखन तुम देखनिहारे। विधि हरि शम्भु नचावनिहारे॥
तेउन जानहि मरम तुम्हारा। अवर तुमहिं को जाननिहारा॥
सो जाने जेहि देहु जनाई। जानत तुमहिं तुमहि होइ जाई॥

इत्यादि इससे ईश्वर को जानना कठिन है यथा गीता आ० ७ श्लोक २४॥ २५॥

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्॥ १३५॥
नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढोऽयंनाभिजानाति लोको मामजमव्ययम् १३६

अर्थ—मेरे अविनाशी सर्वोत्तम स्वरूप को ज्ञान जानने

वाले जानते हैं और मूर्ख लोग मुझे सर्व हृदयमें मूर्त्तिमान रहते हुए ऐसे मेरे को अव्यक्त अर्थात् अमूर्त मानते हैं। अथवा राम कृष्णादि अवतार धारण करने से मूर्ख लोग मेरे को व्यक्तिमापन्नं याने प्राकृत मनुष्य मानते हैं और कहते हैं कि रामकृष्णादि अवतार नहीं थे वे तो कोई योगीराज तेजस्वी पुरुष थे अब न जाने क्या कारण कहते हैं कि योगमाया करके आच्छादित अर्थात् ढका हुआ मैं सब को दीखता नहीं हूं इसी से ये मूर्ख लोग मेरे को अजन्मा अविनाशी नहीं जानते हैं। हे शिष्य इसीसे जानलो भगवत की लीला बड़ी विचित्र है। जहां:--

शिव चतुरानन देखि डराहीं। अपर जीव केहि लेखे माहीं और की तो गिनती ही क्या है इस से सब छोड़ कर प्रभु को भजन करो इस के बिना सब बृथा है यथा–बशिष्ट संहितायां॥

द्विजो वा राक्षसो वापि पापी वा धार्मिकस्तथा।
रामरामेति यो भक्त्या स मुक्तो भवबन्धनात् १३७
अन्तकाले वरारोहे शैवाः शाक्ताश्च वैष्णवाः।
ये स्मरन्ति सदा रामं यान्ति निर्वाणमन्दिरम्॥१३८

अर्थ—ब्राह्मण हो, राक्षस हो, पापी हो तथा धार्मिक ही हो; भक्ति से जो कोई राम राम ऐसा कहता है वह संसार से मुक्त हो जाता है। भाव, जन्म मरण से छूट जाता है। बशिष्ठजी के बचन हैं, अरुन्धतीजी से हैं, कि हे वरारोहे

अन्तकाल में याने मृत्यु काल में जो शैव, शाक्त, गाणपत्य, सौर, या वैष्णव, श्रीरामनाम को सर्वदा स्मरण करते हैं वे निर्वाण नाम अखण्ड मोक्ष स्थान श्री साकेत लोक को जाते हैं पुनः तत्रैव—

पठति सकलशास्त्रं वेदपारङ्गतोपि-
यमनियमपरो वा धर्मशास्त्रार्थवेत्ता ।
अपिच सकल तीर्थं राजते वा हुताग्नि-
र्यदि न भजति रामंसर्वमेतद्‌वृथा स्यात् १३९

अर्थ—षट् शास्त्र पढ़ता हो चारों वेद का पारङ्गत हो यम नियम में निपुण हो, अथवा धर्म शास्त्र के पूर्ण अर्थ का ज्ञाता हो और सब तीर्थ भ्रमण किया हो तथा अग्नि होत्री हो सब प्रकार से युक्त हो यदि श्रीरामजी को नहीं भजता है तो पूर्वोक्त सब ही साधन वृथा हैं इस से श्रीरामजी का भजन ही मुख्य साधन है ।

इति श्रीमदयोध्यावासिना वैष्णव साधु श्रीसरयूदासेन
विरचितः कलिपाखण्डोदयनाम को ग्रन्थः
समाप्त,

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

❁ दोहा ❁

अवधपुरी सम मधुपुरी, शोभित यमुना तीर ।
तहाँ ग्रन्थ निर्म्माण किय, सुमिर सीय रघुबीर ॥
सम्बत् दश नव शत वरष, सप्त शून्य अरु दोय ।
श्रावण परम पुनीत तिथि, झूला जेहिदिन होय ॥

श्रीरस्तु

787

मैनेजर–द्वारिकासिंह
के प्रबन्ध से श्री गुरुननाक यन्त्रालय, स्वर्गद्वार
श्रीअयोध्याजी मे छपा सन १९–३४ ई०

नई बात !   नई बात !!   नई बात !!!

क्या

श्रीरामचरित्र मानस

का

अनोखा संस्करण

जिसमें

संका-समाधान, अनुष्ठान, नवाह, मासपारायणका विश्राम, गोस्वामी जी का चरित्र तथा माहात्म के साथ टिप्पणी का संकलन है संशोधक श्रीअयोध्याजी बड़ी छावनी के प्रसिद्ध रामायणी **श्री रामबालकदास जी**

मूल्य—खुलापत्रा ८)   सजिल्द ६)

सूचना

वैशाख पूर्णिमा १९९२ तक जो ३) रू० भेजेगे उन्हें चार आना रूपया कम कर दिया जायगा ।

जल्दीकरें ! देरनहो !! फिरपछतायगें !!!

सब प्रकार की पुस्तकें मिलने का पताः—

सेठ—छोटेलाल लक्ष्मीचन्द,

वैष्णव पुस्तकालय

श्री अयोध्या जी

अयोध्या

नई बात ! नई बात !! नई बात

क्या।

श्रीरामचरित्र मानस

का

अनोखा संस्करण

जिसमें

संका-समाधान, अनुष्ठान, नवाह, मासपारायणका विश्राम, गोस्वामी जी का चरित्र तथा माहात्म्य के साथ टिप्पणी का संकलन है संशोधक श्रीअयोध्याजी बड़ी छावनी के

प्रसिद्ध रामायणी **श्री रामबालकदास जी**

मूल्य—खुलापत्रा ८) सजिल्द ६)

सूचना

वैशाख पूर्णिमा १९९२ तक जो ३) रु० भेजेंगे उन्हें चार आना रुपया कम कर दिया जायगा।

जल्दीकरें ! देरनहो !! फिरपछतायगें !!!

सब प्रकार की पुस्तकें मिलने का पता:—

सेठ–छोटेलाल लक्ष्मीचन्द,

वैष्णव पुस्तकालय

श्री अयोध्या जी